ISSN : 0972-2351

सी एम एफ आर आइ विशेष प्रकाशन संख्या 77

मत्स्यगंधा

2002

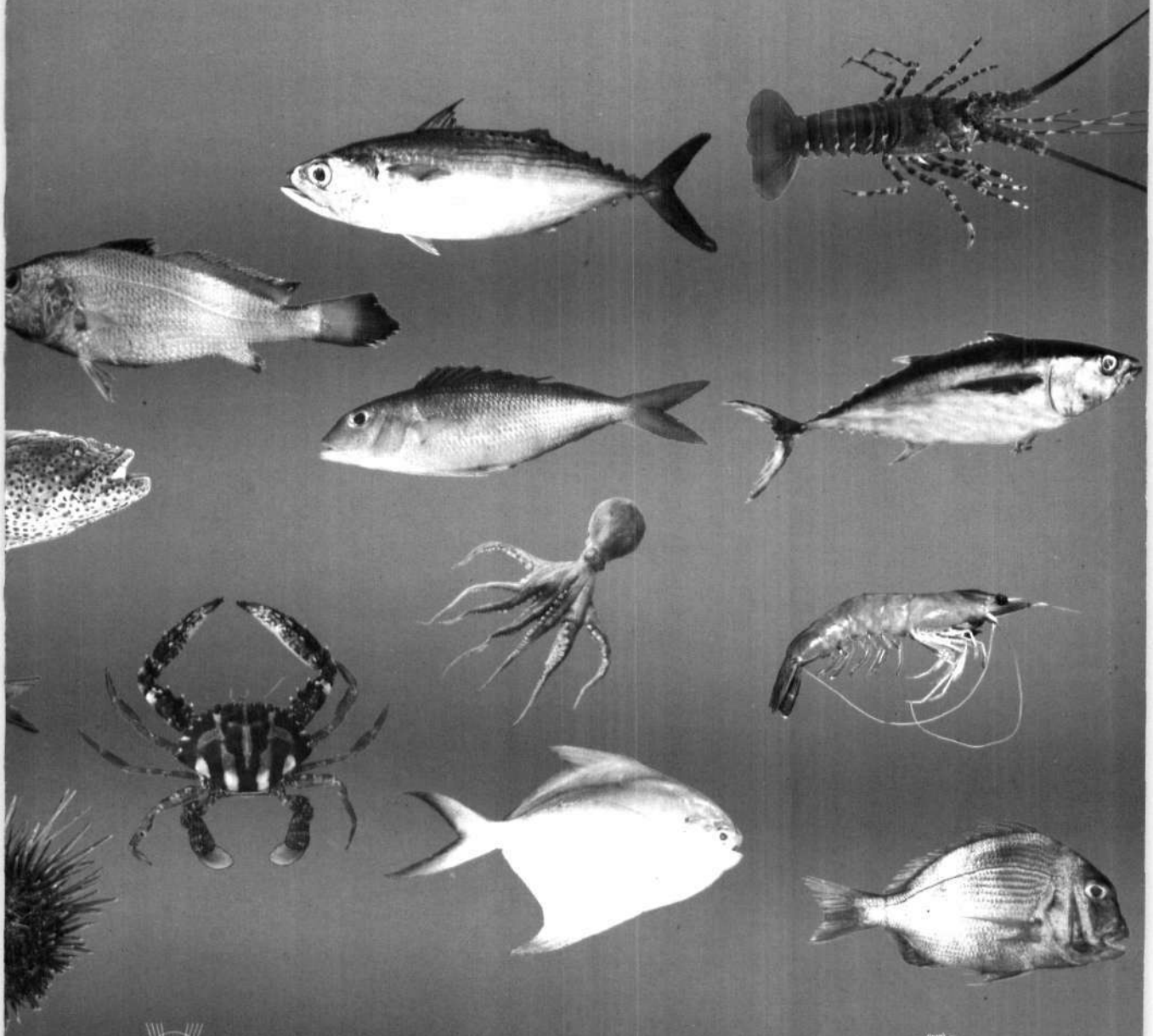

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

डाक संख्या 1603, टाटापुरम डाक, कोचीन 682 014, भारत

वर्ष 2002 के दौरान भारत के समुद्री मछली अवतरण के प्रमुख घटक

वेलापवर्ती पखमछली अवतरण के घटक

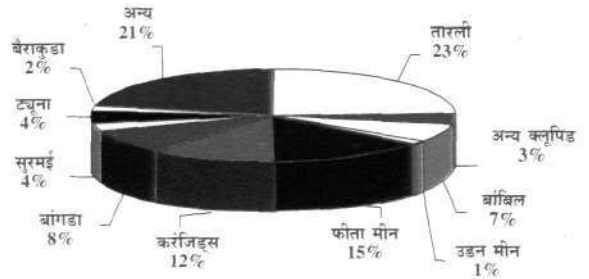

तलमज्जी पखमछली अवतरण के प्रमुख घटक

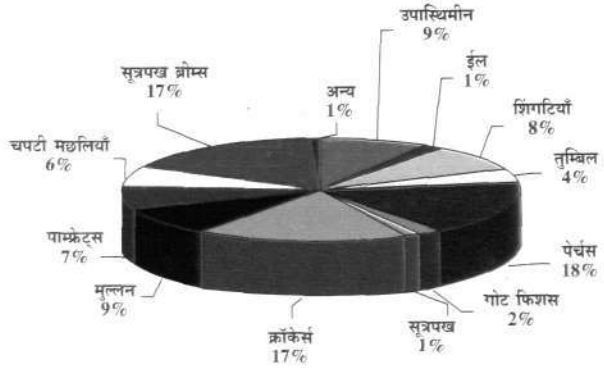

क्रस्टेशियन अवतरण के प्रमुख घटक

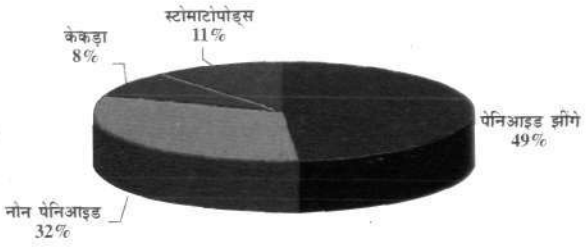

मोलस्क अवतरण के प्रमुख घटक

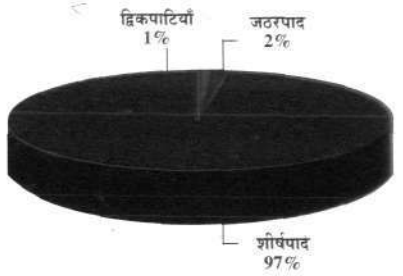

सी एम एफ आर आइ विशेष प्रकाशन
संख्या 77

मत्स्यगंधा

2002

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
डाक संख्या 1603, टाटापुरम डाक,
कोचीन 682 014, भारत

अप्रैल 2003

प्रबंध-संपादक

डॉ मोहन जोसफ मोडयिल

निदेशक

संपादकीय मंडल

डॉ एम. श्रीनाथ

श्री एम. ज़ाफ़र खान

डॉ नारायण कुमार

डॉ चन्द्रकांत पंडित तायडे

श्री चार्ल्स एक्का

श्री के.के. बालसुब्रमण्यन

श्री सुब्रमण्य भट

श्रीमती शीला पी.जे.

सहयोग

ई.के. उमा

ई. शशिकला

सी.ए. लीला

मुद्रण : अप्रैल - 2003

प्राक्कथन

मत्स्यगंधा का यह तीसरा अंक पाठकों के सम्मुख रखते हुए मैं अत्यंत आनंद का अनुभव कर रहा हूँ। मत्स्यगंधा राजभाषा हिंदी में मात्स्यिकी विषयों का विकीर्णन करने का हमारा विशेष प्रकाशन है। यह विनम्र प्रयास कामयाब रहे यह मेरी आकांक्षा है। इस अंक में हमारे फोकस का विषय है *खाद्य सुरक्षा में मात्स्यिकी*।

स्वातंत्र्योत्तर भारत ने कृषि के क्षेत्र में अभूतपूर्व अभिवृद्धि हासिल की कि अब हमारे पास अतिरिक्त खाद्य है जिसका निर्यात भी हो रहा है। कृषि में हुए विकास को लेते हुए हम भारतीय गर्व कर रहे हैं कि खाद्यान्न उत्पादन में हम अग्रणी हैं। याचना पात्र से स्वयं पर्याप्ता की ओर का यह प्रयाण सराहनीय है लेकिन हमारा औसत खाद्य उपलब्धता और प्रति व्यक्ति उपलब्धता में अजगजांतर है; अतिरिक्त खाद्य होने पर भी प्रत्येक व्यक्ति की खाद्य और पोषण सुरक्षा यहाँ अनदेखा गया है। मानव संपदा विकास का सब से बडा खतरा कुपोषण और उस से परंपराओं के बुद्धि विकास में होनेवाली कमी मानी गई है। इसलिए खाद्य और पोषण सुरक्षा पर किए जानेवाला निवेश प्रत्येक देश का सब से बहुमूल्य निवेश होता है। आशा की बात है कि हाल की देश की कार्षिक नीतियाँ खाद्य और पोषण सुरक्षा के साथ साथ अधिकाधिक उत्पादन को लक्षित करते हुए उन्नत खेती और बागवानी की ओर मुड रही है। इस संदर्भ में अपने सस्ते प्रोटीन संपुष्ट उत्पादों के साथ देश के करोडों लोगों को जीविकार्जन का मार्ग प्रदान करने के अतिरिक्त, सकल घरेलू कृषि उत्पादन में मात्स्यिकी विचारणीय योगदान दे रही है।

इस उद्देश्य के साथ इस में जोडे गए 16 लेखों में विविध आयामों से भारतीय मात्स्यिकी का प्रतिपाद्य हुआ है जिस से इस क्षेत्र की संकीर्णताएं और शक्तियाँ उद्घाटित हुई हैं। इस अंक को अत्यंत रोचक बनाने केलिए योगदान दिए सारे लेखकों के प्रति मेरी हार्दिक कृतज्ञता है।

कोचीन
अप्रैल 2003

(मोहन जोसफ मोडयिल)
निदेशक

अनुक्रमणिका

1	मछलियाँ - एक समग्र परिचिंतन *एन.जी. मेनोन एवं एन. जी.के. पिल्लै*	1
2	भारतीय मात्स्यिकी-खाद्य सुरक्षा और जनकल्याण का आधार *एस.एन. द्विवेदी*	11
3	मत्स्य बीज संचयन - जलाशय मात्स्यिकी के विकास का सशक्त आधार *वी. वी. सुगुणन्*	18
4	पश्चजल मछली पालन *एल. कृष्णन*	25
5	आनुवंशिक अभियांत्रिकी - मात्स्यिकी में खाद्य सुरक्षा की प्रत्याशा *पी. जयशंकर*	27
6	भारत की महाचिंगट मात्स्यिकी संपदाएं *ई.वी. राधाकृष्णन और मेरी के. मानिश्शेरी*	30
7	दसवीं पंच वर्षीय योजना के दौरान भारत में समुद्री मात्स्यिकी विकास के लिए कुछ नीति विकल्प *आर. सत्यदास और आर. नारायणकुमार*	36
8	समुद्री मात्स्यिकी उत्पादन में अग्रणी राज्य गुजरात में मात्स्यिकी के विकास के लिए सुझाव *के.वी. सोमशेखरन नायर और जो के. किषकूडन*	40
9	मछली तालाबों में पाई जाने वाली कुछ सामान्य बीमारियाँ तथा उपचार *आर.के. गुप्ता, एन.के. यादव, के.एल. जैन एवं ए.एस. बरमन*	43
10	समुद्री शैवाल - खाद्य सुरक्षा के लिए एक मूल्यवान संपदा *रीता जयशंकर*	48
11	मछली मानव स्वास्थ्य केलिए आदर्श खाद्य *आर. पॉल राज और इमेलडा जोसफ़*	52
12	परुषकवची मात्स्यिकी-खाद्य पूर्ति का औज़ार (गुजरात के प्रसंग में) *जो के. किषकूडन और बी.पी. तुम्बर*	53
13	झींगा उत्पादन और खाद्य सुरक्षा *मिरियम पॉल*	57
14	महासागरीय जैव संसाधनों का मानव हित में उपयोग *आशुतोष डी. देव एवं एम.सी. नन्दीया*	59
15	मत्स्य खाद्यों की सुरक्षा केलिए व्यवस्था *जोसलीन जोस*	61
16	महाराष्ट्र में लघुटूना मात्स्यिकी *मोहम्मद जफर खान*	63
17	मछलियों में पोषण सुरक्षा *प्रीता पणिक्कर, आर. पालराज*	65

मछलियाँ - एक समग्र परिचिंतन

एन.जी. मेनोन एवं एन. जी.के. पिल्लै
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

भूमिका

जलीय क्षेत्र, जो भूगोल का 70% होता है, प्राकृतिक पर्यावरण का भाग है और इसमें दोलायमान विविधता, संकीर्णता और गहनता में जीवन विद्यमान है। कई जलीय क्षेत्रों में, विशालता, प्राणिजातों एवं वनस्पतिजातों की विविधता, उत्पादन शक्यता की दृष्टि से समुद्र जल क्षेत्र का सर्वोत्तम स्थान है और दुनिया के निवासियों की सामाजिक-सार्वजनिक और आर्थिक व्यवस्था की दृष्टि से भी यह क्षेत्र प्रमुख है। इस क्षेत्र के विशेष प्रकार के गतिकीय स्वभाव की वजह से और ज़्यादातर जीवजातों की दृष्टि से यह एक अनोखा क्षेत्र है। लेकिन भौतिक/मौसमिक तथा मानवीय कारणों से इस क्षेत्र के विदोहन योग्य आवास चुनौतिपूर्ण संकटों का सामना कर रहे हैं। इस क्षेत्र की जीव वैविद्यता अत्यंत विस्तृत और पर्यावरण वैरुद्ध्यपूर्ण दिखाया पडता है। अंतराज्वारीय (intertidal) भागों से वितलीय भागों तक, प्रकाशीय तल से मंद प्रकाशीय गभीर सागर तल तक, ध्रुवीय भाग से उष्णकटिबंधीय भाग तक, परिबद्ध समुद्र से खुले महासमुद्र तक के विविध पर्यावरणों में पख मछलियों और कवच मछलियों को जोडकर वाणिज्यिक प्रमुख कई मछलियाँ मौजूद है। पखमछलियाँ जलीय जीवन के अनुरूप रूपांतरित कशेरुकियाँ हैं और कवच मछलियाँ अकशेरुकी। पखमछलियाँ विजातीय समुच्चयन स्वभाव वाली हैं जिनकी आकारमिती, आवास चयन और अनुकूलनशीलता और जीव विज्ञान व स्वभाव में असाधारण विविधता दिखाई पडती है। इन मछलियों जिनको पाद और क्लोम है जलीय असमतापी कशेरुकी कहा जाता है।

मानव सभ्यता शुरू होते ही प्राकृतिक रीति की मछली पकड़ भी शुरू हुई, पहले, जीवन यापन के लिए यह रीति शुरू हुई और बाद में बाज़ार केंद्रित उद्योग के रूप में होते हुए हर तलों के मानव क्षेत्र में रोज़गार के अवसर जगाने का स्रोत बन गया। फिर भी 2000 वर्षों से पहले ही मछली पकड एक घरेलू उद्योग बन गया। इस जलीय संपदा का, केवल जलीय एवं भौमिक जीवों का नहीं, बल्कि परिणामवाद की कोटि और मानव समाज की खाद्य श्रृंखला में भी प्रमुख स्थान है और यह गरीबी हटाने, प्रोटीन कमी मिटाने तथा कई तटीय देशों की आर्थिकता विकसित करने में प्रमुख भाग निभाता है। प्राकृतिक मछली संपदाओं के लिए बढ़ती हुई मांग की वजह से कई विकसित और विकासशील देशों में कमज़ोर और सचेत समुद्री आवासों पर विपरीत असर पड जाता है। यह जीवंत मछली संपदाओं के लिए एक धमकी भी है क्योंकि इन देशों में प्राकृतिक संपत्तियों की स्थिरता कायम रखने में आवास - आर्थिकता के बीच का संबंध चिंता का विषय बन गया है। समुद्री जीव वैविद्यता के विशाल आवासों के परिरक्षक और संपदाओं की सुरक्षा पर मानव हस्तक्षेपों जैसे जलीय क्षेत्रों में मत्स्यन, समुद्री संवर्धन, विसर्ज्यों और फैक्टरियों से छोड देनेवाली विसर्ज्य वस्तुओं के प्रतिकूल संघातों पर नियंत्रण किए बिना प्रत्याशा करना अनुचित है। समुद्री 'मछली' के अपरिमित मूल्यों को नैतिक, संवेदनात्मक, प्रत्यक्ष रूप से आर्थिक और परोक्ष रूप से आर्थिक रूपों से वर्गीकरण किया जा सकता है। अधिकाधिक मछलियाँ मानव आहार बन जाती है और कई अन्य जंतुओं और पक्षियों की खाद्य श्रृंखला में सम्मिलित हैं, कई मछलियों से महंगे तेल, रसायानिक पदार्थों जैसे उपोत्पाद बनाये जाते हैं। कुछ प्रकार की मछलियाँ पालनयोग्य हैं और कुछ केवल मनोरंजन के रूप में जलजीवशाला में पालन की जानेवाली

हैं। मछली धार्मिक, सांस्कृतिक, पारंपरिक, ऐतिहासिक, क्रमिक, संवेदनात्मक, शक्यात्मक, पौष्टिक, औद्योगिक, सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण संपदा है।

धार्मिक

भारतीय पुराण में मछली या 'मत्स्य' (संस्कृत में) भगवान 'विष्णु' का अवतार माना जाता है। महर्षि वेदव्यास, जो एक मछुआ स्त्री का सुपुत्र था और जिनपर महाभारत के कई बहादुर राजवंशों की नियति केंद्रित और प्रतिष्ठापित थी, ने भारतीय संस्कृति के आधारभूत वेदों का संकलन किया है। प्राचीन काल में गतिशील मछली को लक्ष्य करते हुए धनुर्विद्या की परीक्षा की जाती थी। भगवान जीसस क्राइस्ट ने अपने मछुआरे शिष्यों से कहा 'मेरा अनुगमन करो मैं तुम लोगों को मानव के माहीगिर बनाऊँगा'। उपर्युक्त विश्वासों के अनुसार मछली को एक दिव्य परिवेश मिल गया है और इस वजह से मनुष्य मछली को मूल्यवान और अपने विरासत का एक अवश्य भाग मानते हैं। इसी प्रकार मछली को कई साम्राज्यों के निशानों में और कई राज्यों/विभागों/राजनीतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संगठनों के भी निशानों में चित्रित किया गया है।

सांस्कृतिक

आहार के स्रोत के रूप में समुद्र पर निर्भरता मानव सभ्यता के आरंभ से ही शुरू हुई है. और मछली समुद्री संपत्ति का मुख्य स्रोत है और इसे तटीय क्षेत्रों से आसान से पकडा जा सकता है। समुद्रवर्ती गाँवों के तटीय समुदायों के मछली पकडने/खाने वाले लोगों की जीवन रीति और संस्कृति में समुद्री संपत्ति का प्रमुख स्थान है। उनकी संस्कृति, विरासत, लोकाचार, विश्वास, व्यवहार, स्वभाव आदि सब तटीय जीवन अवस्थाओं, इन आलोच्य संपदाओं और इन के मौसमिक उतार-चढाओं का प्रभाव अवश्य पड जाता है, फिर भी उनकी रिवाज़ों और संस्कृति में क्षेत्रीय परिवर्तन, धार्मिक एवं सामुदायिक प्रभाव हो जाएं लेकिन मूल भाव और रीतियाँ आम मछुआरों के लोकाचार पर आधारित होंगे। तटीय समुदायों के अधिकांश त्योहार, अनुष्ठान, लोक कथाएं, पारंपरिक विश्वास आदि मछली और मत्स्यन मौसमों से जुड़े हुए हैं। विश्व व्यापक रूप से मछली एवं मछुआरों के संबंध में असंख्य एवं विविध प्रकार की पुराण कथाएं, कल्पित कथाएं एवं 'मछली कहानियाँ' प्रचलित हैं। असाधारण आकार, विरूपता, रंग और पूर्ण या भागिक रूप से मछली से समानता होने वाले देवता या पौराणिक वीरों, उदाहरणार्थ क्रूसिफिक्स, मछली के शरीर या आकार में समानता वाले अरबिक पात्र/धार्मिक लिपियाँ भक्ति या समादर के प्रतीक माने जाते हैं और इन्हें ईश्वर का प्रतीक या खतरों और बीमारियों के प्रति तावीज़ के रूप में भी माना जाता है।

ऐतिहासिक

मात्स्यिकी का इतिहास अरिस्टोटिल के समय (384-327 बी सी) से शुरू हुआ। उन्होंने मछली की संरचना, स्वभाव, प्रवास, अंडजनन मौसम आदि पर सूचना दी, जो बाद में बिलकुल सही देखी गई; लेकिन मछलियों के वर्ग पर दी गई सूचना थोडी अस्पष्ट थी। सोलहवीं सदी के मध्य में बेलन, रोन्डलेट, सालवियानी और अन्य महानों ने मात्स्यिकी पर किए गए कार्यों को प्रकाशित किया, जो बाद में इस क्षेत्र में आए हुए लिनेयस, रिस्सो, राफिन्स्क्यू, ब्लोच, लासिपेड, क्युवीर, जोरदान, रेगन और बेर्ग जैसे महानों के लिए प्रोत्साहजनक बन गए। इन महानों ने विज्ञान की इस मात्स्यिकी शाखा में जो आधारभूत योगदान दिए हैं, वे आधुनिक मात्स्यिकी विशेषज्ञों के कार्यों के लिए सहारा बन गए और परिणामस्वरूप विश्व की मछली विविधता में अनेक नई जातियाँ भी जोडी गई। भारत में 17-19 वीं सदियों के दौरान ब्लोच, एस्सेल, हामिल्टन, डे तथा वेबर व ब्यूफोर्ट द्वारा किए गए कार्यों से मात्स्यिकी का क्षेत्र समृद्ध हो गया। बीसवीं सदी से लेकर होरा (1920-50), मिश्रा, नायर, सैलास, मेनोन, तलवार और अन्य महानों द्वारा समय समय पर मछली व्यवस्थाओं पर कई योगदान दिए गए।

आकारविज्ञान/जीवविज्ञान/स्वभाव

मछली के शरीर का आकार एवं संरचना पानी के नीचे जीने के लिए अनुकूल है। मछली वास्तविक रूप से सुवाही आकार के शरीर, तकली आकार और पानी में घुसने में सहायक कण्टाग्र मुँह और पानी में तैरने के लिए उत्तेजक शक्ति प्रदान करने लायक विस्तृत पुच्छ पख वाला एक जीव है। अन्य पख जैसे पृष्ठीय पख, गुदीय पख और युगल पख मछली की गति स्थायी करने में और गति रोकने में सहायक होते हैं। मछली के शरीर के विभिन्न आकार होते हैं जैसे पार्श्व भाग दबा हुआ, पृष्ठ-उदरीय भाग चपटा हुआ, गोलाकार, तकली आदि। त्वचा नग्न या चक्राकार या कंधी जैसे छिल्काओं से आवृत है और पार्श्व रेखा में भक्ष्य वस्तुओं और बाधाओं का पता लगाने और तुरंत मोड के लिए स्पर्श अंग हैं। घ्राणेन्द्रिय (Olfactory organs) पानी में होनेवाले रासायनिक वस्तुओं को सूँघने और खाद्य या अन्य मछलियों पर पता लगाने में सहायक होते हैं। अधिकांश मछलियाँ सिर के पार्श्व भागों में स्थित क्लोम की सहायता से साँस लेती हैं बल्कि कुछ मछली जातियाँ फेफड़े से साँस लेती हैं। मछली के अंदर स्थित हवा का थैला मछली को वांछित गहराई में तैरने में सहायक होता है। पखों तथा शरीर के अन्य भागों में स्थित कंटक मुख्यतः सुरक्षा के लिए हैं लेकिन कभी कभी आक्रमण रोकने या आक्रमण के हथियार के रूप में भी इन कंटकों को उपयुक्त किया जाता है। कुछ मछलियों में कंटकों के साथ विष ग्रंथि भी होती है जिससे आक्रमण और भी प्रभावात्मक होता है। कंटक चिकना या दाँतेदार होता है लेकिन विष ग्रंथि अगर हो तो रेखित या कई कोशों के समुच्चय के समान होता है और चर्म में स्थित भी है। विष की तीव्रता विभिन्न जाति मछलियों में विभिन्न प्रकार होती है।

कुछ मछलियों में (पफर, फाइल फिश और अधिकांश टॉड फिश) मांस के अंदर यूकोमेइन्स जैसे विषैला आल्कलोइड होता है। इलक्ट्रिक रे, स्केट, मोर्मिरिड और इलक्ट्रिक ईल जैसे इलक्ट्रोजेनिक मछलियों में विभिन्न तीव्रता में विद्युत शक्ति उत्पादित करने की क्षमता है। कई मछलियों में मानव को भी मारने लायक बिजली का उत्पादन करने की क्षमता है। पूर्ण रूप से या अल्प रूप से विकसित ये इलक्ट्रिक अंग विभिन्न आकार के होते हैं। षट्कोणीय (hexagonal) ट्यूबों या प्लेटों से बनाए गए इनमें तंत्रिकाएं होती हैं। ये अंग मछली जाति के अनुसार शरीर के विभिन्न भागों में स्थित हैं। फिर भी साधारणतया ये अंग पुच्छ की क्लोम पेशी (branchial muscle) या पार्श्वीय पेशी (lateral muscle) से व्युत्पन्न हैं। ये मछलियाँ शत्रु को मारने या अशक्त करने के लिए इन अंगों को उपयुक्त करती हैं। कई जाति मछलियों में त्वचा के ग्रंथि कोश कई आकार और संख्या में प्रदीप्त (luminous) या चमकने वाले अंग बनकर मुख्यतः शरीर के निम्न भाग में स्थित होते हैं। कुछ गभीर सागर मछलियों में पख में चमकने वाले छोटे बल्ब होते हैं। इन मछलियों के ग्रंथि कोशों से उत्पादित लूसिफेरिन नामक स्राव का किण्व (ferment) लूसिफरेस के साथ ऑक्सीकरण होकर ऑक्सीलूसिफेरिन बन जाता है इस तरह प्रदीप्ति (luminescence) होती है। मुख्यतः यह चमक रक्षा के उपाय, खाद्य को ढूँढने में उपयुक्त किया जाता है और कुछ मछलियों में साथी मछली को आकर्षित करने के लिए भी उपयुक्त किया जाता है। कई अस्थिल मछलियाँ (bony fishes) हवा के थैले, पख कंकट, कशेरुक आदि से जुडे आवाज़ बनाने के अंग से आवाज़ बनाती हैं।

आहार लेने के स्वभाव के अनुसार मुँह और इसके आसपास के अंगों में परिवर्तन हो जाता है। कई मछलियाँ क्लोम कर्षणी (gill rakers) की सहायता से पानी का निस्यंदन करके प्लवक जीवों को खाती हैं; लेकिन कुछ परभक्षी मछलियाँ (उदाः सुरा) बडे क्रकचित (serrated) दाँतों से खाद्य मछली को टुकडा करके खाती हैं। इसके अतिरिक्त पानी के ऊपरी तल, नितलस्थ भाग की मछलियों में खाने की सुविधा के अनुसार मुँह और अन्य आहार-अंग परिवर्तित या विकसित हैं। गभीर सागर मछलियों में पख या शरीर के अन्य अंग परिवर्तित होकर खाद्य जीवों को आकर्षित

करने हेतु प्रकाश अंग बन जाते हैं।

अधिकांश समुद्री मछलियों में पुनरुत्पादन रीतियाँ अलग अलग होती हैं; अलग अलग लिंग वाली मछलियाँ या उभयलिंगी; एक अंडजनन या एक मौसम में कई बार अंडजनन या पूरे वर्ष में अंडजनन; अंडों की संख्या थोडी संख्या से दश लाखों तक बदलना; कुछ मछलियों में आंतरिक निषेचन होना लेकिन कई मछलियाँ अंडों और बीजों को चारों ओर के पानी में ही छोड देना जहाँ निषेचन संपन्न होना आदि देखी जाती है। कुछ मछली जातियों में, मादा मछली या पिता मछली द्वारा अंडों/भ्रूणों की परिरक्षा की जाती है और कुछ अन्य मछलियों में सिर्फ मादा या पिता मछली एक धानी (pouch) में या मुख कोष्ठ (oral pouch) में अंडों/भ्रूणों को संग्रहित करती है (नलमीन/pipe fish); कुछ मछलियों में (समुद्री शिंगटियाँ) दो महीनों तक इस तरह संग्रहित किया जाता है। अंडों के स्फुटन की अवधि (hatching time) एक से कई दिनों तक बदलती रहती है। मछलियों का अंडजनन स्वभाव विचित्र एवं विभिन्न होता है; कुछ मछलियाँ समुद्र से मीठा पानी की ओर लंबा प्रवास करती हैं और कुछ मीठा पानी से समुद्र की ओर भी। कई वेलापवर्ती मछलियाँ झुंड बनाकर उथले जल तक आती हैं। कुछ गभीर समुद्र मछलियाँ (लान्टेर्न मछली) प्रकाश अंग से प्रकाश लगाकर साथी को आकर्षित करती है। प्रवाल भित्तियों की मछलियाँ अपने शरीर/पख के दीप्त रंग से साथी को आकर्षित करती हैं।

कई वेलापवर्ती और कुछ तलमज्जी मछलियाँ आहार एवं प्रजनन के लिए छोटे झुंड से बडे बडे झुंड बनाकर एकत्रित करती हैं। पर्यावरणीय तथा जीव विज्ञानीय घटकों के अनुसार कुछ मछलियाँ नीचे से ऊपर दिशा तक या ऊपर से नीचे की ओर प्रवास करती है बल्कि अन्य कुछ मछलियाँ पर्यावरणीय/मौसमिक घटकों और जीव विज्ञानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए या पर्यावरणीय चरम अवस्थाओं से बचने के लिए तट की ओर या विपरीत दिशा में रेखीय (horizontal) प्रवास करती हैं।

क्रमिक प्रमुखता

मछलियों को फाइलम कोर्डेटा (Plylum chordata) के अंदर सहनु (jawed) जलीय कशेरुकियों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। क्रमिक रूप से ये ग्नाथोस्टोमाटा अधिवर्ग (Gnathostomata superclass) में श्रेणी मत्स्य के अंदर उप फाइलम वेर्टिब्रेटा के अंदर आती हैं। मत्स्यश्रेणी (grade) की दो उप श्रेणियाँ (subgrades) और चार वर्ग (class) होते हैं। मान्यता प्राप्त और कम परिभाषित दो आनुवंशिक (Phyletic) शाखाएं हैं उपास्थिमीन (Elasmobranchi) और टीलिस्टोमी (Teleostomi)। इस क्षेत्र के अधिकांश विशेषज्ञ इस बात पर सहमत हैं कि कोर्डेट की पूर्वज परम्परा शूलचर्मियों (Echinoderms) से आए हुए हैं। लगभग 400 दशलाख वर्षों पहले डिवोनी (Devanian) कल्प में हैगमीन (hag fish) और लैम्प्रे (lampreys) जैसे, हनुरहित मछलियों से मछली जातियाँ फूट पडी हैं। मछलियों की सभी जीवित जातियों को कुल 445 कुटुम्बों और लगभग 21650 वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है जिनका 61% समुद्री/पश्च जल में रहने वाली हैं।

उपश्रेणी (सबग्रेड) इलास्मोब्रांकियोमोर्फी में क्लास प्लकोडेस्मी और क्लास कोन्ड्रिक्थिस आते हैं; पहले क्लास में, सिर और अंस मेखला (shoulder girdle) में त्वचीय अस्थिल प्लेट (dermal bony plates) मौजूद हैं; सिर विशल्क (head shield) ट्रंक विशल्क के साथ चलायमान योजित किया गया है; क्लोम कक्ष (gill chamber) अग्र भाग की ओर विस्तृत होकर पार्श्व भाग में प्रच्छद (opercula) से आवृत है, पाँच क्लोम चाप (gill arches), कशेरुक तांत्रिक (neural) और हीमल चापों के साथ, गुदीय पख (anal fin) नहीं है, द्विसमपालि (diphyceral) या विषमपालि (heteroceral) पुच्छ भी है। इसकी नौ ओर्डस पहचान की गई हैं और सभी डेवोनियन कल्प के आरंभ से अंत तक और मिसिसिपियन कल्प के आरंभ में ही विलुप्त हो गई हैं। कोन्ड्रिक्थिस क्लास (Condrichthyes

class) उपास्थियुक्त कंकाल के साथ, साधारणतया कैल्सीभूत (calcified), खोपड़ी सीवन (sutures) रहित, हनु से दाँत निकाले गए; नासाद्वार अधर के दोनों भागों में; हवा थैला नहीं; आंत्र सर्पिल कपाट (spiral valve) के साथ; आंतरिक निषेचन; सम्पुटित (encapsulated) भ्रूण; रक्त में अधिक मात्रा में यूरिया दिखाया पड़ता है। इस क्लास में मुख्यतः परिणाम (evolution) की दो शाखाएं होती हैं और इन्हें होलोसेफाली (Holocephali) और एलास्मोब्रान्की (Elasmobrachi) नामक दो उपवर्गों (Subclass) में पहचाने गए हैं। इन दोनों उपवर्गों में 6 कोटियाँ (orders), 25 कुटुम्ब (families); 151 वंश (genera) और 793 जातियाँ (species) उपलब्ध हैं। उपवर्ग होलोसेफाली में अश्मीभूत (fossilized) तथा जीवित (डेवोनियन कल्प के अंत से हाल ही तक) मछलियाँ सम्मिलित हैं और इनमें क्लोम का आवरण और दोनों भागों में क्लोम द्वार (होलोस्टाइल) होते हैं; श्वासरन्ध्र (spiracle) नहीं है; अवस्कर (cloaca) और जठर (stomach) नहीं है, नग्न त्वचा; पुरुष जीवों में आलिंगी अंग (clasping organ) मौजूद हैं। उपवर्ग चिमेरिफोर्मस के अंदर आने वाले विद्यमान कोटि में तीन कुटुम्बों के अंदर लगभग 30 जातियों के छः वंश को वर्गीकृत किया गया है। सिलियोरिनिडे, कारकारिनिडे, स्फिरिनिडे और स्क्वालिडे अत्यंत प्रमुख कुटुम्ब हैं। दुनिया की सबसे बडी मछली तिमि सुरा *रिंकोडोन टाइपस* इस उपवर्ग का सदस्य है और रिंकोडोन्टिडे कुटुम्ब के अंदर आती है। यह प्लवक खाने वाली और अंतस्थ मुख (terminal mouth) वाली मछली है। अपवाद के रूप में इस मछली का बडा क्लोम द्वार और लंबा क्लोम कर्षणी भी है। अधिगण (superorder) बाटिडोन्डिमोर्फा में रे और स्केट आते हैं और 9 कुटुम्बों के अंदर 51 वंशों और 424 जातियों में वर्गीकृत किया गया है। प्रिस्टिडे, रिंकोबाटिडे, राजिडे, डासियाटिडे, मिलियोबाटिडे और मोबुलिडे सबसे प्रमुख कुटुम्ब हैं।

सबग्रेड टेलिस्टोमी को मुख्यतः दो क्लासों याने एकान्तोडी और ओस्टिक्थिस में वर्गीकृत किया जाता है। एकान्तोडी क्लास अप्पर ओर्डोविसियन के समुद्री संस्तरों में पाए जाते हैं और क्लाइमाटिफोर्म को एकान्तोडियनों का पूर्वज माना जाता है। ओस्टिक्थिस वास्तविक अस्थिल मछलियाँ हैं। स्यूत कंकाल (sutured skull), हड्डियों में संयुक्त दाँत, दोनों भागों में नासाद्वार, हवा थैला या फेफडा, असाधारण आंत्र सर्पिल कपाट; आंतरिक निषेचन अपूर्व; रक्त में निम्न सांद्रता में यूरिया इन मछलियों की विशेषताएं हैं। इस क्लास को चार उप क्लासों में विभाजित किया जा सकता है। ये हैं डिप्न्यूस्टी, क्रोसोप्टेरिजी, ब्राकियोप्टेरिगी और एक्टिनोप्टेरिगी। डिप्न्यूस्टी के अंदर आस्ट्रेलियन लंग फिश (कुटुम्ब : सेराटोडोन्टिडे), साउथ अमेरिकन लंग फिश (कुः लेपिडोसिरेनिडे) और आफ्रिकन लंग फिश (कुः प्रोटोप्टेरिडे) सम्मिलित हैं। उपक्लास क्रोसोप्टेरिगी के एक जीवंत सदस्य, जो है दक्षिण आफ्रिका में दिखाया पडने वाला *लाटिमेरिया कौलुम्ने* (1.8 मी लंबाई), को छोडकर सभी सदस्यों पर जीवाश्मों से जानकारी प्राप्त हुई है। उपक्लास ब्राकियोप्टेरिगी एक्टिनोप्टेरिगी बहिन वर्ग में ही आता है जिस का एक ही कुटुम्ब याने पोलिप्टेरिडे होता है और 11 विद्यमान मीठा पानी जातियों के अतिरिक्त अधिकांश जानकारियाँ जीवांश्मों से प्राप्त हुई।

सभी कशेरुकियों का सबसे प्रचुर एवं विविध वर्ग टेलियोस्ट्स उपक्लास एक्टिनोप्टेरिगी के अंदर आता है। टेलियोस्टों की जाति 35 विद्यमान क्रमों और 409 कुटुम्बों के अंदर रखी गई है। समुद्र से विदोहित अधिकांश आस्थिल मछलियाँ ऑर्डर पेर्सिफोर्म्स, क्लूपिफोर्म्स, प्ल्यूरोनेक्टिफोर्म्स, एन्गिवल्लिफोर्म्स, सिलूरिफोर्म्स, साइप्रिनोडोन्टि फोर्म्स आदि के अंदर आती हैं। ऑर्डर पेर्सिफोर्म्स सबसे अधिक विविधता वाला और सबसे बडा कशेरुक ऑर्डर माना जाता है और इसके अंदर 150 कुटुम्ब, लगभग 1400 वंश और 7800 जातियाँ होती हैं।

पर्यावरणिक

समुद्री मछलियाँ समुद्र जल क्षेत्र से संबंधित होने की

वजह से उनके समूह बनने, प्रवास, समुच्चयन, आहार, अंडजनन, बढ़ती, मृत्युता आदि पर भौतिक और रासायनिक स्थितियाँ और जीव वैज्ञानिक प्राचलों और आवधिक/मौसमिक गतिकीय परिवर्तनों का प्रभाव पड जाता है और इस कारण से मात्स्यिकी की शक्यता और उत्पादन में उतार-चढ़ाव भी होता है। जलीय क्षेत्र की तापीय स्थिति से मछलियों की सक्रियता, गति और उपापचय प्रक्रियाओं में प्रभाव पड जाता है। इष्टतम तापमान से बहुत अधिक तापमान से प्रौढ़ता, अंडजनन, ऊष्मायन (incubation), अंड/डिंभक का विकास तथा मछली जाति की बढ़ती में परिवर्तन होता है और इस से उत्पादन, वितरण, खाद्य जीवों की प्रचुरता पर भी प्रभाव होता है तद्वारा खाद्य के लिए मछलियाँ मौसमिक प्रवास भी करती हैं। ताप-प्रवणता (thermocline) के परिवर्तन से पानी के नीचे से ऊपर की ओर मछली-प्रवास होता है जिस के कारण वेलापवर्ती मात्स्यिकी पर अनुकूल प्रभाव हो जाने या मत्स्य तल से विदोहन योग्य मछलियाँ निष्कासित होने की संभावना है। पानी के प्रवाह में होने वाले मौसमिक परिवर्तन से अंडजनन तल से मछली के अंड/डिंभक/पोना मछली (fry) ऊपरी सतह के नर्सरी खाद्य के तल में पहुँचते हैं जिस से मात्स्यिकी में मछली उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव होता है, लेकिन कभी कभी पानी के शक्त प्रवाह से मत्स्यन तल से उत्पादित मछलियाँ निकाल जाने पर उल्टा असर पड जाता है। लवणता में होने वाले परिवर्तन से अंडों की तरणशीलता और मछली के परासरण नियमन पर प्रभाव पडता है गर्मी के मौसम में उच्च लवणता होने पर मछलीअंडों, डिंभकों और किशोरों के नीचे से ऊपर की ओर होने वाले प्रवास पर बाधा पड जाता है। मछलियाँ पी एच में होने वाले छोटे परिणाम जल्दी से समझ सकती हैं और तदनुसार प्रतिकूल परिस्थितियों से बच सकती है। उत्स्रवण (upwelling) से अधस्तल जल (subsurface water), जो कम ऑक्सिजन और ज़्यादा पौष्टिकता से युक्त है, द्रवस्थैतिक संतुलन (hydro-static balance) सामान्य संतुलन से बराबर रखने केलिए प्रवाह/अपसारी (divergent) तरंग द्वारा ऊपर आता है। उत्स्रवण की गति एवं फैलाव मौसमी घटकों तथा द्रवगतिकीय (hydrodynamics) पर आधारित होंगे। प्राथमिक/द्वितीयक उत्पादकों से समृद्ध उत्स्रवित जल में मछलियाँ आहार के लिए एकत्रित होती हैं। अत: उत्स्रवण के क्षेत्र अच्छे मत्स्यन धरातल होते हैं। तट के कई भागों में पंक तट (mud bank) की उपस्थिति (उदा : केरल तट) मछली समुच्चयन प्रमुख स्थान हो जाता है।

पानी में प्राथमिक तथा द्वितीयक उत्पादकों की प्रचुरता और फैलाव अधिकांश मछलियों के प्रवास/समुच्चयन का द्योतक होता है। *कुछ प्रकार के खाद्य जीव मछली प्रचुरता के सूचक हैं लेकिन कुछ अन्य जीव विपरीत संबंध भी दिखाते हैं।* नदियों से बहकर आनेवाली पोषक वस्तुएं उपवेलांचल क्षेत्र (sublittoral region) को उपजाऊ बनाती हैं और यह क्षेत्र कई वाणिज्यिक प्रमुख मछलियों को आकर्षित करता है। इस से तटीय मात्स्यिकी की भी अभिवृद्धि होती है। प्लवक (वनस्पति या प्राणी) फुल्लिकाओं की मौसमिक उपस्थिति से विषाक्त पदार्थ उत्पादित होते हैं और इनसे पानी प्रदूषित होता है। मछली साधारणतया ऐसे स्थान छोडकर भाग जाती हैं। इस कारण से ऐसे स्थानों की मात्स्यिकी पर प्रतिकूल प्रभाव पड जाता है। इस प्रकार की फुल्लिकाओं (blooms) के स्थानों से मछलियों की भारी मृत्युता रिपोर्ट की गई है। उपतट/नदीमुख आवासों के प्रदूषण 'तप्त स्थानों' (hot spots) में रहने वाली मछलियाँ जीवन चक्र पूरा करने में असमर्थ हो जाती हैं या मर जाती हैं।

पारिस्थितिक

समुद्री क्षेत्र के विभिन्न आवासों में रहनेवाली मछलियों में गुणता, संरचना एवं स्वभाव की विभिन्नताएं दिखाई पडती हैं। पर्यावरणीय और जलवायु स्थितियाँ (environmental conditions), मछली जाति की विशेष पर्यावरण की आवश्यकता, खाद्य की उपलब्धता और अंडजनन रीति के आधार पर समुद्री क्षेत्र में इन मछलियों का वितरण हो जाता

है। ये मछलियाँ अंतराज्वारीय क्षेत्र से खुले महासागर और सुप्रकाशी ऊपरितल से गहरे प्रकाश रहित महासागर तल तक विभिन्न दाब (pressure) मेखलाओं में रहती हैं। ऊपर से नीचे के क्रम में इन मछलियों को वेलापवर्ती, मध्य वेलापवर्ती, गभीर वेलापवर्ती (bathy pelagic) और तलमज्जी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। ये मछलियाँ रेती, चिकनी, पत्थरी और प्रवाल जैसे समुद्री धरातलों में रहती हैं और उनके वास स्वभाव और जीवेतर/जीवीय स्थितियों के अनुसार आकार/स्वभाव की विशेषताओं में परिवर्तन/विविधताएं दिखाई पडती हैं। *उपतटीय तल और ऊपर के प्रकाश भाग में अनुकूल स्थितियों के कारण उर्वरता और विविध मछली जातियों की प्रचुरता (समुद्री मछली जातियों का 78%) मौजूद है बल्कि ढालू तल और महासागर तल के बाद यह प्रचुरता घटती जा रही है।* खुले सागर की समान स्थितियाँ जाति विभिन्नता की प्रत्याशा देती हैं। इस कारण से मछली जातियों का केवल 13% खुले सागर में दिखाया पडता है। प्रवाल भित्तियों के पास के गरम पानी मछली विविधता से संपन्न हैं जहाँ कम से कम 4000 मछली जातियाँ निरपेक्ष रूप से रहती हैं।

शक्यता

भारतीय अनन्य आर्थिक मेखला (EEZ) की समुद्री मात्स्यिकी की शक्यता 3.9 मेट्रिक टन है जिसे अनुगभीर (bathy metrically) रूप से 0-50 मी की गहराई से 2.28 टन, 50 मी से परे की गहराई 1.395 मेट्रिक टन और महासागरीय क्षेत्र में आकलित की 0.295 मेट्रिक टन है। वर्तमान स्थिति में 0-50 मी. की गहराई मेखला में इस क्षेत्र से विदोहन करने योग्य शक्यता पार की जा चुकी है। लगभग 2.66 मेट्रिक टन (1998) के कुल वार्षिक समुद्री मछली उत्पादन के 80% में तारली, बांगडा, बंबिल, ट्यूना, श्वेत बेट, करंजिड, फीतामीन आदि जैसे वेलापवर्तियों की विभिन्न जातियाँ (1.27 मे.ट) और सयनिड, पेर्च, सुरा, रे, चपटी मछली, पाम्फ्रेट, मुल्लन, तुम्बिल आदि जैसे तलमज्जी मछलियाँ (0.70 मे. ट.) उपस्थित थी। समुद्र से अनियंत्रित रूप से मत्स्यन करने की वजह से कई प्रमुख समुद्री मछली जातियाँ खतरे में पड गई हैं। कई परम्परागत समुद्री मछली स्टॉकों का पूर्ण रूप से विदोहन हो चुका है और इस कारण से स्टॉक की अवनति हुई है। स्थानीय एवं क्षेत्रीय मात्स्यिकी में अतिमत्स्यन की वजह से बडे आकार वाली, लंबे जीवनकाल वाली, देर से प्रौढ होने वाली और कम मृत्युता वाली मछलियों (उदा: समुद्री शिंगटियाँ, सुरा, सूत्रपख मीन आदि) का उल्लेखनीय ह्रास हुआ है। अच्छी परिस्थिति और औद्योगिक क्षेत्रों के मीठा पानी की मछलियाँ खतरे में पड गई है और समुद्री क्षेत्रों में रहने वाली इसी जातियाँ भी अतिमत्स्यन की वजह से अतिजीविता की समस्याओं में पड गई हैं। *भारतीय समुद्र में तिमि सुरा (रिंकोडोन टाइपस), शिंगटियाँ (टकिस्युरस टेन्युस्मिनिस, टी. डसुमेरी), सूत्रपख (पोलिन्यूमस इन्डिकस) तथा जॉड जम्पर (लैक्टारियस लैक्टारियस) जैसे तटीय तलमज्जियाँ इस प्रकार इन मछलियों का स्टॉक खतम हो चुका है कि उनकी जीव संख्या कायम रखने की प्राकृतिक क्षमता भी समाप्त हो गई (मुख्यतः मछलियों की दो अवस्थाएं- किशोर/छोटी अवस्था और अंडजनक अवस्था) है।* औद्योगिक/घरेलू प्रदूषण होने वाले 'तप्त स्थानों' के भागों से मछली के नाश की रिपोर्ट नहीं हुई है। इसका कारण यह होगा कि मत्स्यन नियम व विनियमों का नियंत्रण (भारतीय वन्यजीव अधिनियम 1972, तटीय भागों को तटीय नियमन मेखला (CRZ) के रूप में घोषित करके अधिसूचना 1991, 1994, 1996; और जीव वैविद्यता अधिनियम आदि) और पर्यावरण, जाति/आवास की क्षति से संबंधित विषयों पर विधिक कार्रवाई और इन सबके अतिरिक्त तटीय प्रदूषण रोकने में लोगों की जानकारी।

पौष्टिक

समुद्री मछलियाँ आसानी से पचने वाली व आसानी से स्वीकारने योग्य यह कम खर्च में लोगों को पौष्टिकता प्रदान करती हैं। *मछली के खाद्ययोग्य भागों का अनुपात : नमी-67.90%, प्रोटीन - 10.20%, वसा 0.4-20% और खनिज-0.5-2% है।* मछली प्रोटीन में आवश्यक मात्रा में

अमिनो आसिड और उच्च पौष्टिक मूल्य भी मौजूद है। सामान्यतः मछली लिपिड बहु असंतृप्त वसा अम्ल (Poly unsaturated fally acid - PUFA) से समृद्ध है जो सीरम लिपिड और सीरम कोलेस्टेरॉल स्तर कम करके रुधिर परिसंचरण (blood circulation) की दर बढ़ाने में सहायक होता है। मछलियों में अच्छी मात्रा में कैल्शियम, फोस्फरस, कोपर तथा अयेर्न जैसे खनिज और कम मात्रा में अयोडिन और फ्लूरिन है। मछली तेल में वसा विलीन विटामिन ए, डी एवं ई अधिक मात्रा में उपलब्ध है। मछली मांस में जल विलीन विटामिन बी -कॉम्प्लेक्स है। उपर्युक्त सूचनाओं के अतिरिक्त सुरा (shark) मांस में 2.5% यूरिया और वाष्पशील रूप में नाइट्रोजन, अमोनिया और ट्राइमेथिलामीन; जिगर में 30-50% वसा भी होते हैं। अधिकांश वाणिज्यिक प्रमुख मछलियों के मांस में होने वाले रासायनिक मिश्रण और इन्द्रियग्राही गुणताओं (organoleptic properties) का निर्धारण किया गया है और संसाधन एवं खपत के लिए प्रलेखित किया गया है। मछली खाने के स्वास्थ्यकारी गुणताओं का प्रचार करने के फलस्वरूप समुद्रवर्ती देशों में मछली खानेवालों का प्रतिशत गण्य रूप से बढ़ गया है। उपभोक्ता मुख्य रूप से स्वास्थ्य की दृष्टि से साफ, संसाधित और परिरक्षित मछली पसंद करते हैं। उनकी आवश्यकता की पूर्ति के लिए उत्पादन, संसाधन, उत्पाद विकास, पैकिंग, भंडारण तथा परिवहन की नई प्रौद्योगिकियाँ विकसित की गई हैं। पकडी गई मछलियों का अधिकांश भाग ताज़ी स्थिति में खा जाता है फिर भी कुछ भाग नमक डालकर सुखाने के लिए भी उपयुक्त किया जाता है। मछली की पौष्टिक गुणता सुरक्षित रखने के लिए शीतीकरण (block & IQF), डिब्बाबद्धन और सुरंग शुष्कन (tunnel drying) के नए तकनीक प्रचलित हैं। आजकल निर्यात के लिए आधुनिक मछली संसाधन उद्योग में अवश्य रूप से होने वाली आवश्यकता है वैज्ञानिक ढंग से विकसित गुणता निर्धारण रीति - हज़ार्ड अनालिसिस क्रिटिकल कन्ट्रोल पोइन्ट (HACCP) पौष्टिक समृद्ध और मूल्य वर्द्धित और अधिक समय उपयुक्त करने योग्य (long shelf life) मछली उत्पादों जैसे बाटेर्ड और ब्रेडड चीज़ें, मछली अचार, वेफर, *सुरुमी* (10% से कम वसा के साथ स्टेबल इमल्शन), फिश स्ट्रीक, मिन्स्ड फिश आदि तैयार करने के लिए कई तकनीकें और रीतियाँ अब प्रचलित नहीं हैं। ऐसे उत्पाद तैयार करके मल्टीलामिनेटड, पारदर्शी (transparent), निर्जर्मित (sterilized) पैकेटों में रखे जा सकते हैं।

संवेदनात्मक

समुद्री मछलियों में आकार, संरचना, रंग मिश्रण, गति, स्वभाव, संसग आदि की दृष्टि से प्रवाल आवासों की मछलियाँ मानव की पसंद और आकर्षण की मछलियाँ हैं। इनमें अधिकांश (बट्टरफ्लाइ फिश, डाम्सेल फिश, स्कोर्पियोन फिश, सर्जन फिश, कार्डिनल फिश, क्लाउन फिश, बाट फिश) मछलियाँ जलजीवशाला में पालने योग्य हैं। आजकल विश्व भर में प्रतिवर्ष 0.75 बिलियन अमरीकी डोलर का समुद्री सजावटी मछलियों का विपणन होता है। इनका विपणन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और बढ़ती हुई मांग की पूर्ति केलिए पालन, स्फुटनशाला कार्यों और जीवंत परिवहन के नए तरीके एवं तकनीक विकसित किए गए हैं। *प्रवाल द्वीपों और समुद्रवर्ती देशों, जहाँ सजावटी मछलियाँ ज़्यादतर मौजूद हैं, में निर्यात एवं आर्थिक आय बढ़ाने का अच्छा उपाय है इन मछलियों का विपणन*। प्राकृतिक प्रवाल आवासों में इन मछलियों की उपस्थिति पर्यटकों को आकर्षित करने और मनोरंजन के अवसर प्रदान करने केलिए गुणकारी है।

खतरनाक

कई समुद्री विषाक्त मछलियाँ चर्म पनडुब्बों (skin divers) के लिए खतरनाक हैं विषाक्त धूर्णीकशाभों की फुल्लिकाओं में चरने के समय कई मछलियों के अंगों में विष एकत्रित हो जाता है। टेट्राडोन्टिडे कुटुम्ब (पफर मछलियाँ) की कई मछलियों के जिगर, गोनाड और आंत्र में विष की मात्रा इतनी अधिक है कि खानेवालों की मृत्यु भी होती है। स्कोर्पियोनिडे कुटुम्ब (स्कोर्पियोन फिश, लयन फिश, स्टोन

फिश) में विषयुक्त कंदक होते हैं और अचानक इन से विष लग जाने पर मृत्यु होती है। दंश शंकुश (sting ray) में क्रकची (serrated), शक्त और अस्थिल पुच्छ होता है जिसपर विषयुक्त ऊतक होता है। इस पुच्छ से अचानक घायल होने पर विष से मुक्त होना मुश्किल है। सिगानिडे (राबिट फिश) और पो प्लोटोसिडे (ईल, शिंगटी) कुटुम्बों की मछलियों में पृष्ठ कंटक होते है जिनसे दर्दकारी चोट लग जाएगी। सर्जनफिश (एकान्तूरिडे कुटुम्ब) के पुच्छ पिडन्किल में तेज़ और गतिशील कंटक होता है मछली को पकडते वक्त इस से अत्यधिक दर्द वाली चोट होने की संभावना है। सुरा, बैराकुडा, ग्रूपर, नीडिल फिश, मोरे ईल और ट्रिगर फिश में स्कूबा निमज्जकों को आक्रमण करने का स्वभाव है।

औद्योगिक

अब तक गणना की गई 1570 समुद्री मछली-जातियों में से केवल 300 जातियाँ औद्योगिक रूप से प्रमुख हैं और इन्हें भारत के चारों ओर के समुद्र से मानव खपत एवं विपणन के लिए पकडा जाता है और बहुत जाति मछलियों को सजावटी मछली/जलजीवशाला के लिए निर्यात किया जाता है। तटीय देशों के मत्स्यन उद्योग में समुद्री मछलियों का महत्वपूर्ण स्थान है और आर्थिकता और सकल घरेलू उत्पादन की दृष्टि से भी ये सबसे आगे हैं। *भारत की समुद्री मात्स्यिकी का उत्पादन वर्ष 1950 में 0.6 मे.ट. था जो वर्ष 1997 में 2.71 मे.ट. तक बढ़ गया और औसत बढ़ती दर 6.4% थी। लेकिन पिछले दशक में बढ़ती दर 4% तक घट गया*। कुल समुद्री मछली उत्पादन का 80% में वेलापवर्ती फिनफिश, तलमज्जी क्षेत्र और गहरे/मध्य उपतट समुद्र की मछलियाँ थी। औद्योगिक मात्स्यिकी में लगभग 47,000 छोटे यंत्रीकृत यान और 180 बडे पोत लगे हुए थे जिस से 60% और 81% का इष्टतम मत्स्यन आकलित किया गया था। यंत्रीकरण और निर्यात विपणन की अधिकता से समुद्री मात्स्यिकी का औद्योकीकरण भी विचारणीय रूप से बढ़ गया। औद्योगिक क्षेत्र से (यंत्रीकृत) 1.9 मे. टन मछलियों की प्राप्ति हुई है जिस में समुद्री फिनफिशों का हिस्सा 1.5 मे. ट. था। फिनफिश पकड का लगभग 3-9% हिमशीतित, सुखाए गए और मूल्य वर्द्धित उत्पादों के रूप में निर्यात किया जाता है। मात्स्यिकी उद्योग में कई समान उद्योग जैसे मत्स्यन क्राफ्ट (लकड़ी, लोहा, फाइबर ग्लास), मत्स्यन गिअर (विभिन्न मत्स्यन उपस्कर), मत्स्यन जाल, समुद्री इंजन, बाहरी इंजन का निर्माण/मरम्मत; बर्फ प्लान्ट, कोल्ड स्टोरेज, संसाधन प्लान्ट आदि सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त मछली जिगर तेल (विटामिन - ए का स्रोत), स्क्वालीन (गहरे समुद्र की सुराओं के जिगर में होनेवाला असंतृप्त हाइड्रोकार्बन), आइसिंगग्लास (फिश मॉस), फिन रे, मछली खाद्य, कोन्ड्रोइटिन सल्फेट (मछली अस्थि/उपास्थि से), फिश कोलैजन, किण्वित (fermented)/हाइड्रोलाइस किए गए मछली उत्पाद आदि भी इस क्षेत्र के उद्योग में कार्यरत हैं। ये उद्योग रोज़गार के अवसर जगाने के मुख्य क्षेत्र हैं।

आर्थिक

भारतीय महासागर के समीपस्थ समुद्रवर्ती देशों में समुद्री मात्स्यिकी रोज़गार, खाद्य एवं पौष्टिक सुरक्षा और विदेशी मुद्रा कमाने का स्रोत आदि में मुख्य स्थान निभाती है। भारत में यह क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से तेज़ बढ़नेवाला क्षेत्र बन गया है। GDP माने सकल घरेलू उत्पादन में मात्स्यिकी का हिस्सा वर्ष 1980-81 में 1.9% था (रु. 8.06 बिलियन) जो वर्ष 1993-94 में 3.9% (रु. 67.5 बिलियन) बन गया। *समुद्री मात्स्यिकी पकड के 85% का विपणन आंतरिक बाज़ारों में किया जाता है जिस से लगभग 8000 करोड रुपए का आर्थिक लाभ होता है। कुल पकड का 15% का निर्यात होता है जिससे हाल के वर्षों में 5000 करोड रुपए का लाभ हुआ है*। फीतामीन, पॉम्फ्रेट, सुरमई, बांगडा, रीफ कोड तथा स्नापेर्स जैसे समुद्री फिनफिशों का अधिकांश भाग निर्यात किया गया है। वर्ष 1995-96 अवधि के दौरान इनमें से एक लाख टन (कुल पकड का 4%) मछलियों का निर्यात किया गया और 372 करोड रुपए का लाभ भी प्राप्त हुआ। जीवंत मछलियों के परिवहन के लिए

विकसित/उन्नयन की गई नई प्रौद्योगिकी से पिछले कुछ वर्षों में जीवंत मछलियों (ग्रूपर, ईल आदि) के निर्यात विपणन की मांग बढ़ गई जो आर्थिक रूप से लाभकारी भी सिद्ध हुआ है।

कई समुद्रवर्ती देशों के आर्थिक और तटीय सामाजिकता के स्तर में तटीय समुद्र और समीपस्थ समुद्र से मिलनेवाली जीवसंपदा का महत्वपूर्ण स्थान होने के नाते समुद्री आवासों या संपदाओं पर मानव द्वारा होने वाले संघातों पर निगरानी/अनुवीक्षण करना आवश्यक है। *मछली जातियों के वर्तमान स्टॉक और अधिकतम वहनीय पकड (MSY) के निर्धारण केलिए मल्टी स्टेज रान्डम सांप्लिंग द्वारा मछली अवतरण के वर्ग/जातिवार आंकडे और विदोहित जातियों की जीववैज्ञानिक प्राचलों के आंकडे प्राप्त होना आवश्यक है।* जीवन क्षेत्र के अजैविक प्राचल (तापमान, लवणता, विलीन ऑक्सिजन, पोषक, प्रकाशवेधन आदि) उत्पादन आंकडा और समुद्र उपरितल के तापमान और शक्य मत्स्यन मेखला (PFZ) की हरितक सान्द्रता दिखाने वाले उपग्रह चित्र मात्स्यिकी की भविष्यवाणी के नमूने हैं। उपर्युक्त उपायों द्वारा दायित्वपूर्ण मत्स्यन के लिए उद्योगों या सरकार एजेन्सियों को उचित प्रबंधन के सुझाव दिए जा सकते हैं। प्राकृतिक रूप से लगातार उत्पादन उचित रूप से क्षेत्रवार/विशेष प्रकार के प्रबंधन से प्राप्त किया जा सकता है।

तटीय उत्पादन बढ़ाए जाने का एक और जीवनक्षम तरीका तकनीकी/आर्थिक ढंग से अत्यंत उपयोगी और उच्च आर्थिक मूल्य वाली जातियों (चैनोस, लैटस, मुजिल, एटरोप्लस) को तटीय पश्चजलों में या तटवर्ती पंजरों, पेन आदि (एपिनिफेलस, सिल्लागो, सिगानस) में गृह-पालन/पालन किया जाना है। पालन की गई मछली जातियों के किशोरों को प्राकृतिक धरातलों में वापस डालने या समुद्र रैंचन करने से तटीय समुद्र में इन जातियों का स्टॉक (प्रग्रहण मात्स्यिकी) बढ़ाया जा सकता है। लेकिन उच्च मूल्य वाली या नाशोन्मुख मछलियों को इस तरह पुनः संभरण करने की रीति की तकनीकी/आर्थिक संभाव्यता का मूल्यांकन किया जाना आवश्यक है। ■

भारत विश्व व्यापार संगठन का हस्ताक्षरी है। भारतीय वैज्ञानिकों को खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने केलिए कठिन प्रयास करना चाहिए।

- अटल बिहारी वाजपेइ

भारतीय मात्स्यिकी-खाद्य सुरक्षा और जनकल्याण का आधार

एस.एन. द्विवेदी
विज्ञान, अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी अकादमी, भोपाल

1. प्रस्तावना - भारत में मीठा पानी आवास तंत्र ज्यादातर उत्पादनशील हैं

विश्व की कुल मछली पकड का 90% समुद्री मात्स्यिकी का योगदान है, जिस से भौगोलिक मात्स्यिकी आर्थिकता अत्यंत प्रबल बन गई है। भारत में स्थिति अलग है। भारत उष्णकटिबंधीय मानसून क्षेत्र में स्थित और अनेक नदियों, सरोवरों, झीलों, जलाक्रांत भूमि, बाढ़ भूमी, टैंक तथा ग्रामीण तालों से युक्त एक बडा महाद्वीप है। शीतोष्ण मेखला में स्थित विकसित राज्यों के दृष्टांत में और उनके सलाहों के अनुसार भारत ने समुद्री मात्स्यिकी के क्षेत्र में बडे पैमाने में निवेश किया है। लेकिन समुद्री मात्स्यिकी की अपेक्षा अंतःस्थलीय मछली उत्पादन अत्यंत शीघ्र गति में बढ़ गया है। वर्ष 1950 के वर्षों में अंतःस्थलीय मछली उत्पादन भारत के कुल मछली उत्पादन का 30% था। अंतःस्थलीय क्षेत्र में कम निवेश के साथ इस क्षेत्र की मात्स्यिकी में वर्ष 2000 के दौरान 45% की बढ़ती हुई। इस से यह स्पष्ट है कि भारत में विशिष्ट प्रकार के उष्णकटिबंधीय आवास तंत्र है जिनकी तटीय एवं अंतःस्थलीय मात्स्यिकी अत्यंत उत्पादनशील है। ये आवास तंत्र प्रति एकक समय और व्यय में अत्यधिक प्रतिलाभ देते हैं और ये आसान से प्रबंधन करने योग्य और तेज़ बढ़ती करने वाले हैं। अतः मात्स्यिकी की प्रबंधन नीति का परिवर्तन आवश्यक है। यह उष्णकटिबंधीय पारिस्थितिकी और जलजीवकृषि के तत्वों पर आधारित होना चाहिए।

2. नदीय आवास तंत्र

भारत महाद्वीप में मात्स्यिकी के विकास के लिए किए जाने वाले प्रयास समूचे नदीय आवास तंत्र के प्रबंधन पर आधारित होना चाहिए। नदी बेसिन में नदियों के उच्च भाग, नदी, झील, सरोवर, नहर, सरोवरों के प्रमुख क्षेत्र, जलाक्रांत भूमि, बाढ़ भूमि और ग्रामीण ताल सम्मिलित हैं। ये सब आपस में संबंधित हैं और ये सब मिलकर नदीय आवास तंत्र बन जाता है। अतः भारत के अंतःस्थलीय संसाधनों से इष्टतम उत्पादन लिए जाने के लिए विभिन्न नदीय आवास तंत्रों का प्रबंधन आवश्यक है। सरोवरों को भी सम्मिलित करके पूरे नदीय आवास तंत्र का मूल उद्देश्य अति ऊँचाई के क्षेत्रों तथा देहातों में खाद्य सुरक्षा प्रदान करना, स्व-रोज़गार को बढ़ावा देना, निर्यात, जलीय संपदाओं के परिरक्षण एवं लगातार विकास केलिए जानकारी जगाना और इन सबके ऊपर लोगों की जीवन स्थिति सुधारना है।

3. सरोवर मात्स्यिकी एक सुषुप्त आर्थिक महाकाय जो चरम बढती का सूचक

इस आवास तंत्र में जैव वैविद्यता, आनुवंशिक संपदाओं और प्राणिजात एवं वनस्पतिजातों के विकास का आधार नदियाँ है। सामान्य स्वस्थ स्थिति में मात्स्यिकी की प्रगति की नींव नदियाँ होने पर भी उनकी उत्पादनशीलता तथा उत्पादन औसत रूप से सतत रहते हैं। अतः मछली उत्पादन और रोज़गार जगाने के लिए सरोवर मुख्य उत्पादन तल एवं आर्थिक इकाई बन जाते हैं। सरोवरों का वर्तमान उत्पादन 20 कि.ग्रा/हे. है लेकिन यह 200 कि.ग्रा/हे. तक बढ़ाया जा सकता है। मध्यम सरोवरों की उत्पादन शक्यता 1000 कि. ग्रा./ हे. और छोटे सरोवरों का उत्पादन 2000 कि. ग्रा./हे. तक बढ़ाया जा सकता है। हाइ-टेक् फिशरी एस्टेटों

के सूत्रपात से सरोवरों के प्रमुख क्षेत्रों की जलाक्रांत भूमियों से अच्छा आय प्राप्त किया जा सकता है। इन जलाक्रांत भूमियों को उचित तरह के रूपायन से मछली खेतों में परिवर्तित करके 50 टन/हे. तक उत्पादन किया जा सकता है। देहाती तालों और पंचायत के टैंकों, जहाँ कार्बनिक विसर्ज्य बहकर आते हैं और ये बहु उद्देश्य टैंक भी हैं, में मछली उत्पादन 5 टन/हे. तक शक्य किया जा सकता है। ये सब जलाशय आपस में संबंधित हैं और सब मिलाकर बहु स्थानों का एक बडा आवास तंत्र बन जाता है। अतः आगामी दशक में सरोवरों और इनके प्रमुख भागों की जलाक्रांत भूमि मछली उत्पादन बढ़ाने के लिए सबसे प्रत्याशित क्षेत्र मानी जाती हैं। अब सरोवर मात्स्यिकी एक सुषुप्त आर्थिक महाकाय है। ये जलाशय भारत की आबादी को पौष्टिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए मछली उत्पादन में चरम वृद्धि लाने और स्वरोज़गार जगाने योग्य हैं।

4. महानगरों के निकट कार्बनिक विसर्ज्यों का पुनः चक्रण

बडे बडे महानगरों के निकट स्थित सरोवरों में विसर्ज्य बहकर आना स्वाभाविक है। उचित रूप से और पर्याप्त मात्रा में विसर्ज्यों का उपचार करने से कार्बनिक पदार्थ जैविक वस्तु एवं पोषक पानी में मिल जाना है और इस वजह से कम लागत से उत्पादन भी बढ़ाया जा सकता है। जलीय प्रदूषण के नियंत्रण के लिए भी यह सहायक है। दिल्ली में विसर्ज्य आग्रा तक बहकर वहाँ से 'कीताम सरोवर' में पहुँच जाते हैं और इस सरोवर का उत्पादन 600 से 1000 कि ग्रा/हे. है। भोपाल में सारे विसर्ज्य हलाली सरोवर में मिल जाता है और सरोवर से उच्च उत्पादन भी मिल जाता है। मध्य प्रदेश के सिनोई का सिनोई टैंक और महाराष्ट्र के थाने का नगरपालिका टैंक नगरों के विसर्ज्य अनुकूल रूप से जलकृषि के लिए उपर्युक्त किए जाने के अच्छे उदाहरण हैं। फिर भी अतिपोषण रोकने के लिए रोग निरोध के उपाय स्वीकार किया जाना चाहिए। इसके उदाहरण हैं मुम्बई का पोवाय झील और हैदराबाद का हुसैन सागर। भोपाल में 'छोटा तालाब' अतिपोषण युक्त था और इसमें निविष्ट विसर्ज्यों का नियंत्रण किया और ओसोनाइसेर्स और प्लवमान फाउन्डन प्रयुक्त करके पुनः पानी भरा दिया (संदर्भ मिश्रा और वाजपेयी, टामोट आदि, भोपाल, रेड्डी और चन्द्रप्रकाश, सी आइ एफ ई, मुम्बई)। लगभग 200-400 वर्षों से पहले बनाए गए पुराने सरोवर गाद से भर गए थे। इनमें अतिपोषण और रोगों का नियंत्रण, पानी की मात्रा बढ़ाये जाने और गुणतावाली मछली की उत्पादकता बढ़ाये जाने के लिए इनका निकर्षण करते हुए गाद तथा विसर्ज्यों को निकालना आवश्यक है। इस तरह कार्बनिक वस्तुओं के अवकर्षण और पुनःचक्रण से प्रदूषण का नियंत्रण और उत्पादनक्षमता में बढती लायी जा सकती है। आजकल की हाइ-टेक व्यवस्था में भी कार्बनिक वस्तुओं का अवकर्षण तथा रोग एवं प्रदूषण को रोकने के नियंत्रण उपाय भी स्वीकारना चाहिए। रोगनिरोध के लिए भी उपाय लिया जाना आवश्यक है।

5. भारतीय सरोवर अत्यधिक उत्पादन क्षमता वाले हैं फिर भी मछुए गरीब

भारत में लगभग 2 मिलियन हेक्टयर सरोवर क्षेत्र है और अधिकांश सरोवर विविध उद्देश्यों जैसे सिंचाई, जल विद्युत् शक्ति आदि के लिए बनाए जाते हैं। वर्ष 1950 में सरोवरों का औसत मछली उत्पादन 10 कि.ग्रा./हे. से कम था और बाद में इस में कई गुनी बढ़ती हो गई। भारत के वार्षिक रूपाइत मछली खेतों की वार्षिक उत्पादन की शक्यता एवं क्षमता 200 टन मछली/हे. है। उदाहरणार्थ मध्यप्रदेश सरोवर अत्यंत उत्पादनशील देखा जाता हैं। गांधीसागर सरोवर की कुल बिक्री 7.0 करोड़ रुपए से ज़्यादा थी और टावा सरोवर की कुल बिक्री 4.0 करोड़ रुपए भी थी। इसी लिए सरोवर मात्स्यिकी को सुषुप्त महाकाय कहा जाता है। पर सरोवरों से पकडी जानेवाली मछलियों के लिए मछुओं को प्रति किलोग्राम के लिए औसत 6 रुपए मिल जाते हैं लेकिन कोलकत्ता बाज़ार में मछली का भाव प्रति किलोग्राम के लिए 40-80 रुपए हैं। अतः सरोवर मछली का मार्केट

मार्जिन लगभग 42% है। अधिकांश लाभ विपणन में लगे हुए चुने गए व्यक्तियों को ही मिल जाता है। मछुए मछली पकडते हैं और एक वर्ष तक पालन करते हैं; पर एक वर्ष के बाद उन्हें केवल 16 रुपए मिल जाते हैं। लेकिन एक हफ्ते में विपणन कार्य करनेवाले व्यापारियों को मिलनेवाला मार्केट मार्जिन लगभग 42% है। प्रशासनिक प्रक्रियाएं और सामाजिक स्थितियाँ मछुओं की प्रगति के अनुकूल नहीं है। पहले सरकार ने मछुआ सहकारी संघों की सहायता की थी लेकिन उनका समूचा प्रभाव सीमांत होने के कारण मछुए लोग गरीबी रेखा के आसपास ही रह गए। इस स्थिति के सुधार के लिए उत्पादों का विकास और स्थानीय विपणन करना चाहिए।

6. नई आर्थिक नीति - माननीय प्रधानमंत्री श्री वाजपेयी ने कहा कि भारत विश्व व्यापार संगठन का हस्ताक्षरी है - भारतीय वैज्ञानिकों को खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कठिन प्रयास करना चाहिए - देश में मछली के फास्ट फुड काउन्टरों की ज़रूरत है

नई आर्थिक नीति के अंदर मक्डवेल जैसे और इसके समान की अन्य बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भारत के खाद्य क्षेत्र में प्रवेश कर रही हैं, भारत के माननीय प्रधानमंत्री श्री वाजपेयीजी ने कहा है कि भारत विश्व व्यापार संगठन का हस्ताक्षरी है। भारतीय वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीविद् भारत की भलाई के लिए विश्व व्यापार संगठन का उपयोग करने के कठिन प्रयास करें। वैज्ञानिक यह मानते हैं कि "जो लघु है वह सुंदर है"। निर्णय लेनेवालों को यह स्वीकारना चाहिए कि उपभोक्ताओं को यथोचित मूल्य पर मछली की उपलब्धि सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय प्रौद्योगिकी का विकास, स्थानीय जन-शक्ति की कुशलता का विकास और स्थानीय विपणन प्रोत्साहित किए जाने के लिए कदम उठाने चाहिए। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने उत्पाद जो मात्रा में जितना भी कम हो, उच्च मूल्य पर विश्व भर बिक्री करती हैं और उनके विपणन तंत्र में खर्च भी अधिक है। इस आर्थिक याथार्थ्य की वजह से छोटे छोटे उत्पादन केन्द्रों में इनका प्रवेश आसान नहीं है। भारत के वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकीविदों तथा प्रबंधकों को आर्थिक दृष्टि से दुर्बल विभागों के लोगों जिनमें समुद्र तट के देहातों में रहने वाले अ.जा/अ.ज.जा के लोग भी शामिल हैं, का जीवन स्तर का उन्नयन करने और पोषण तथा खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सरोवरों तथा उनके प्रमुख भागों का अच्छी तरह से उपयोग करना चाहिए। अतः भारत में उत्पादों की कुशलता विकसित करने के अवसर सुनिश्चित करने और उपभोक्ताओं की इच्छानुसार खाने के लिए तैयार उत्पाद बनवाने और मछली तथा मछली उत्पाद फास्ट फुड काउन्टरों से बिकने और स्थानीय बाज़ारों में न्यायोचित मूल्य पर ये मिलने के लिए एक प्रमुख नीति परिवर्तन आवश्यक बन गया है। इस अभियान में मछुओं को उत्पादन से उत्पाद विकास तक के 'सिरे से सिरे तक' की नीति अपनानी चाहिए और पैकिंग तथा विपणन में उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, मछुआरे मछली का पालन करेंगे, पकडें को परिरक्षण एवं संसाधन करेंगे और फास्ट फुड पार्लरों से बिकेंगे। "हर एक टैंक बैंक होता है" इसे एक सामान्य न्यारे के रूप में अपनाए। गाँधी सागर, हत्नाली, टावा, पोंग बांध आदि और अन्य सरोवरों के उत्पादन का आंकडा देखने पर इस नारा का प्रामाणीकरण हो जाता है। हर एक सरोवर की कुल बिक्री इतनी अधिक है कि इस से स्थानीय लोगों को मछली बेचकर लाभ कमाने वाले असंख्य वाणिज्यकार प्रभावित हो जाते है। मछुआरों की शिक्षा, कुशलता विकास व्यावसायिक शिक्षा केलिए उचित प्रबंधन व्यवस्था करते हुए इस उद्यम से सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है। जलीय संपदाओं का विकास, मछुआरों के हित, जनता को न्यायसंगत मूल्य पर मछली की उपलब्धता आदि इसके उद्देश्य हैं।

जलजीव कृषि से जुडे हुए संस्थानों, विशेषतः भारतीय कृषि अनुसंधान के संस्थानों ने यह सूचित किया है कि बढ़ती हुई या बढने वाली मछलियों का मूल्य 10 रु. प्रति कि. ग्रा. हैं अतः पूर्ण मछली को 30 रु./कि. ग्रा. की दर में विपणन किया जा सकता है। काटी और संसाधित मछली आर्थिक रूप से लगभग 60 रु./कि.ग्रा. की दर में बेची जा

सकती है। प्रौद्योगिकी का उन्नयन तथा खाद्य संसाधन एवं उत्पाद विकास की व्यवस्था में परिवर्तन लाने से जनता को पोषण सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है और मछुओं और महिलाओं के जीवन स्तर में सुधार लाने में सहायक हो जाएंगे।

7. हाइ-टेक शिंगटी पालन-मांसाहारी शिंगटी "थाइ मागुर"

भारत में थाइ मागुर का पालन निरोधित है। फिर भी पश्चिम बंगाल में 120 एकड़ के 24 परगानाओं में इसका पालन किया जाता है। इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश और भारत के अन्य कई भागों में इसका पालन किया जाता है। पश्चिम बंगाल के ग्रामीण किसान लोग प्रति वर्ष प्रति हेक्टयर से 70 टन मछली का उत्पादन करते हैं और रु. 30/कि.ग्रा. की दर में बेच देते हैं। इस थाइ शिंगटी का पालन हमारे शिंगटी पालन के लिए एक चुनौती है। भारत को भी एक उच्च स्तरीय शिंगटी पालन व्यवस्था का विकास करना चाहिए। सी आइ एफ ए भूवनेश्वर के डॉ साहू द्वारा वांछित गुणता और उच्च बढ़ती दर और स्वजाति भक्षण नहीं होने वाले संकर वर्गों के विकास के लिए कुछ प्रयास किए जा रहे हैं। फिर भी शिंगटी पालन का एक सुव्यवस्थित तरीका विकसित करना एक मुख्य समस्या है और इस के लिए अत्यंत ध्यानपूर्ण प्रयास किया जाना आवश्यक भी है। *पान्गासियस सुची* और *नोटोप्टीरस नोटोप्टीरस* के पालन के लिए भी सहायता आवश्यक है। भारत को 60-90 दिनों में छोटे आकार (200-350 ग्रा. आकार) और कम हड्डी वाली मछलियों का पालन और विपणन के लिए अल्पकालीन व्यवस्थाएं विकसित करना आवश्यक है। इस से उपभोक्ताओं की आभिरुचि और मांग की पूर्ति हो जाएगी और इस से उच्च और इष्टतम मूल्य भी कमा सकते है।

8. "जो लघु है वह सुंदर है" योजना आयोग द्वारा लघु मात्स्यिकी एवं पंचायतों को अधिक आबंटन दिया जाना चाहिए

ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च उत्पादकता वाले अंतःस्थलीय आवास स्थान स्थित हैं और स्थानीय लोगों द्वारा स्थानीय सुविधाओं से इनका प्रबंधन किया जाना चाहिए। जलीय संपदाएं अत्यधिक उत्पादनशील और ग्राम विकास का प्रमुख पुरजा भी हैं। मात्स्यिकी को अंतःस्थलीय क्षेत्रों में प्राथमिकता है, भारत के योजना आयोग द्वारा अंतःस्थलीय मात्स्यिकी के लिए आवश्यक निधि का आबंटन और अधिकाधिक सहायता और संपदाएं प्रदान किया जाना चाहिए।

पंचायतों में मानव प्रशिक्षण एवं व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाएं होनी चाहिए। मध्य प्रदेश राज्य सरकार जैसे कुछ राज्य सरकारों ने मत्स्यन करने का अधिकार ग्राम पंचायतों और जिला परिषद को सौंपा दिया है और मछुआरों को मछली पकड़ने का प्रोत्साहन देती है। ये लोग मूलभूत रूप से कृषि विशेषज्ञ हैं और इन्हें मछली पालन एवं विपणन के लिए मानव प्रशिक्षण तथा कुशलता विकास और वित्तीय सहायता दी जाने की ज़रूरत है, अन्यथा ये मत्स्यन टैंक दूसरों को पट्टे पर दिए जाने पडते हैं या किसी बदल व्यवस्था के रूप में करार के आधार पर इनका प्रबंधन किया जाता है। परिणामस्वरूप औसत उत्पादन 1000 कि. ग्रा./हेक्टयर से कम होता है लेकिन राष्ट्रीय उत्पादन लगभग 3 टन/हे. और आंध्रा प्रदेश में उत्पादन 8-10 टन/है होता है।

इस व्यवस्था में परिवर्तन होना चाहिए और स्थानीय मछली एककों द्वारा फास्ट फुडों का विकास, विपणन, संग्रहण और पैकिंग किया जाना चाहिए। मछलियों का परिरक्षण और विकास सुनिश्चित करने के लिए सरोवरों से प्राप्त आय के 25% को बडे आकार की शिशु मछलियों के संभरण के लिए पुनः निवेश किया जाना है। इस के लिए स्फुटनशाला (हैचरी) तथा पंजर पालन की ज़रूरत पडना है। मछुआरों को इन कार्यों में प्रशिक्षण दिया जाना और सुनिश्चित करना है कि विपणन उन्हें द्वारा किया जाता है या नहीं। जहाँ शिक्षित मछुआरा लोग मछली कार्यों का प्रबंधन करते हैं वे अच्छी तरह संभाल करते है, इसका उदाहरण है वेरसोवा मछुआरा सहकारी संघ। वर्ष 1950 से लेकर अब

तक वेरसोवा मछुआरा सहकारी संघ के सदस्यों को अपने नाव, डीज़ल पम्प, बर्फ फैक्टरी और बसें होते हैं। आज़ादी से लेकर संघ का वार्षिक उत्पादन 5.0 करोड रुपए है और कभी नष्ट नहीं हुआ है। अतः आधुनिक प्रौद्योगिकी और शिक्षा स्वीकार करना, मछुआरों की शिक्षा और कुशलता का विकास करना और विपणन से पहले उत्पादन से विपणन तक के कार्य सुनिश्चित करना उत्पादन बढ़ाने के मुख्य घटक हैं। केंन्द्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान के सहयोग से लिंकिंग रोड, मुम्बई में विकसित मछली विपणन एककों में वर्ष 1978 से लेकर अच्छी तरह विपणन हो रहा है। सभी पंजाबी मछली फास्ट फुड स्टॉलों में खाने केलिए तैयार मछली खाद्य उत्पाद उपभोक्ताओं को कम दाम में मिल जाते हैं और ये स्टॉल लाभ से चलाए जा रहे हैं। इसके लिए वेरसोवा गाँव के मत्स्य उत्पादन, संसाधन, संभरण, बर्फ आदि सहायताएं प्राप्त होती हैं। यहाँ के एक उद्यमी अपने साथियों के साथ थाने सरोवर में मछली का पालन करके विपणन कार्य में लगा हुआ है जिनके सहारे में 80 कुटुम्ब कार्यरत है। उन्होंने नए आधुनिक सुविधाओं के मकान बनाए है। गाँव के लोगों के लिए ताज़ी मछली पहुँचाते हैं।

यह, आधुनिक प्रौद्योगिकी और स्थानीय संपदाओं, स्थानीय उत्पाद विकास और विपणन को उपयुक्त करके किए जाने वाले उत्पादन से उपभोग तक के संसाधन का अच्छा उदाहरण है।

9. वनस्पतिजातों एवं जीवजातों की जीव वैविद्यता का परिरक्षण

मध्य प्रदेश के कई भागों में मात्स्यिकी विकास एवं जल जीव कृषि को तालाब संवर्धन और साधारण आकार के बडे सरोवरों में पालन के रूप में विभाजित किया गया है। नदियों में से किसी प्रतिबंध के बिना मत्स्यन किया जा सकता है। आबादी में हुई वृद्धि और कई मानवीय हस्तक्षेपों के फलस्वरूप घरेलू विसर्ज्यों से जल स्रोतों का प्रदूषण हो गया। उपचार किए बिना विसर्ज्य और गंदा पानी नालियों में छोड देने की वजह से पानी प्रदूषित बन जाता है जिसके कारण कई रोग भी हो जाते है। यह ध्यान देने की बात है कि नदी, सरोवर, छोटे झील और तालाब नदीय आवास व्यवस्था के भाग हैं। अतः किसी एक भाग खराब या आवर्धन करने पर इसका असर अन्य भागों में पड जाता है। उपचार के बिना छोड देने वाले विसर्ज्य हमारी आवास तंत्र को खराब कर देते हैं, जीव वैविद्यता कम कर देते हैं और इस से कुछ जाति के जीव गायब हो जाते है। अतः मात्स्यिकी के परिरक्षण के लिए भारत को वनस्पतिजातों तथा जीव जातों के परिरक्षण पर ध्यान देना चाहिए।

10. हर एक नदी तट का अलग आवास तंत्र के रूप में प्रबंधन

मीठा पानी के प्राकृतिक आवास तंत्रों में पहाड़, नदियाँ, घाटियाँ, झील, सरोवर, तालाब, जलक्षेत्र, बाढ़ क्षेत्र, मौसमिक टैंक और ज्वारनदमुख सम्मिलित हैं। इन स्थानों के आवास तंत्र सदियों से विकसित और सारे जल क्षेत्रों में फैले हुए हैं। इस से यह संकेत मिलता है कि हर एक नदी और इसके समुद्र में संगम के स्थान तक एक आवास तंत्र होता है और इस आवास तंत्र को ऐसे ही प्रबंधन करना आवश्यक है। आवास तंत्र के सभी संघटकों के बीच आपसी संबंध है और तंत्र की उत्पादकता विभिन्न संघटक के योगदान पर आश्रित है। अतः सरोवर मात्स्यिकी और जलजीव कृषि के लगातार विकास के लिए नदी के आवास तंत्र का प्रबंधन करना आवश्यक है। इस से मात्स्यिकी का व्यापक प्रबंधन और परिरक्षण सुनिश्चित हो जाएगा और इस जानकारी से उत्पादन भी इष्टतम हो जाएगा। भारत को, सरोवरों के प्रबंधन से हटकर आवास तंत्रों के प्रबंधन की ओर ध्यान देना चाहिए।

11. प्रवासी मछली और झींगा जातियों के लिए बांधों के पास फिश लैडर

सिंचाई और बिजली उत्पादन के लिए नदियों पर बांधों का निर्माण करने पर मछलियों के प्रवास में बाधा उत्पन्न हो जाएगी। इसी प्रकार प्रजनन एवं खाद्य के लिए

मछलियों का दूर स्थानों तक जाने में भी प्रतिबंध हो जाता है। आज़ादी से पहले बांधों के पास कई फिश लैडर बनाए गए थे लेकिन इनमें अधिकांश संतोषजनक ढंग से कार्यरत नहीं हुए। स्पोर्ट फिशरीस के महसीर और मीठा पानी झींगों में हुई घटती इसका उदाहरण है। गोदावरी नदी के धोलेश्वर के पास *माक्रोब्राचियम* जाति की भी भारी कमी हुई। ये किशोर अवस्था में ही बहाव में निकल गए। इस के फलस्वरूप नदी के ऊपरी भाग में दो जाति झींगों की क्षति हुई। अतः प्रवासी जाति मछलियों के *आवास, जीवविज्ञान* और *शरीरक्रिया विज्ञान पर अध्ययन करके फिश लैडर विकसित* किया जाना आवश्यक है, और पूरे वर्ष में इनका प्रबंधन किया जा सकता है।

12. परंपरागत जानकारी, जागरूकता की कमी और व्यक्तिगत हित केलिए विभिन्न नदी व्यवस्थाओं से मछली पकड

पारम्परिक रूप से नदी के आरम्भ स्थान या ऊपरी भाग में अनुसूचित जाति/जनजाति के विभिन्न गोत्रों के लोग बसते हैं और वे डयनमिट विस्फोटन से या पेडों के फल या छाल में विष लगाकर प्राकृतिक संपदाओं की पकड करते हैं। पिछली सदी के दौरान डयनमिट विस्फोट और कृषि पीडक नाशियों के प्रयोग से मछली मारने से सरोवरों की उत्पादकता में अत्यधिक नाश हो गया है। यह तो, मछली पालन, मत्स्यन और विपणन के बारे में अवबोध की कमी के कारण होता है। लेकिन जनजाति के लोग परम्परा से लेकर जीविका चलाने के लिए प्रकृति और अन्य प्राकृतिक संपदाओं का सहारा लेते हैं। उन लोगों से हुई बातचीत से यह संकेत मिल गया है कि "भगवान ने प्राकृतिक संपदाएं प्रदान की है और जीविका चलाने के लिए इन को पकडने का अधिकार है"। अधिकांश लोग अनपढ़ और जलजीव कृषि की शक्यताओं के बारे में अवगत नहीं होने के कारण वे डयनमिट विस्फोटन से मछलियों को मारते हैं और आवास तंत्र खराब करते हैं। इसलिए उन लोगों की कुशलता का विकसित करने और अवबोध जगाने के लिए आवश्यक कार्यक्रम आयोजित करना और डयनमिट विस्फोटन के अतिरिक्त मछली पकडने के लिए अन्य प्रकार के तरीकों से परिचित कराना आवश्यक है। जनजाति लोग आवास तंत्रों के उपयोक्ता होने के नाते संपदाओं के लगातार विकास और आवास तंत्रों को विषाक्त करेने के बिना परिरक्षण सुनिश्चित करने के लिए उन लोगों को जागरूक बनाना चाहिए। यह ग्रामीण विकास का एक प्रमुख प्रयास है और यह ग्रामीण विकास विभाग, व्यावसायिक शिक्षा और मात्स्यिकी संगठनों, तकनीकी शिक्षा विभाग और डी एस टी, डी बी टी जैसे मानव शक्ति प्रशिक्षण विभाग और अपरंपरागत संसाधन मंत्रालय और पर्यावरण एवं वन विभाग का दायित्व है। विभाग के आदेश के अनुसार ये एकीकृत विकास की अपेक्षा खंडशः विकास करने के लिए तैयार होना है। मानव कल्याण के लिए प्राकृतिक संपदाओं की अनुकूलतम उपयोगिता और परिरक्षण के लिए एकीकृत क्षेत्रीय विकास करना सही तरीका है। अतः इस कार्यक्रम का उद्देश्य प्राकृतिक संपदाओं का लगातार विकास और ग्रामीण विकास केलिए प्रकृति का परिरक्षण जिनमें जानकारी उपाधियाँ और कला प्रौद्योगिकियों की आधुनिक शाखाओं का उपयोग भी सम्मिलित है, यहाँ उद्देश्य स्पष्ट है लेकिन प्रयास कठिन है इसलिए प्राकृतिक संपदाओं के परिरक्षण के लिए कुशलता विकास, व्यावसायिक शिक्षा और सामाजिक जागरूकता जगाने के लिए बहु संस्थानीय प्रयास आवश्यक निकला है।

अंतःस्थलीय मात्स्यिकी विशेषतः जलजीव कृषि, उत्पादन बढ़ाने और ग्रामीण मेखला में स्वरोज़गार का अवसर मिलने और प्रोटीन आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक मुख्य क्षेत्र के रूप में उभर आया है। पानी की गुणता का प्रबंधन और प्रदूषण कम करने हेतु जैव विसर्ज्यों की उपयोगिता (गंदा पानी और कृषि) और एक प्रमुख क्षेत्र है। कार्प के खाद्य के लिए *अज़ोला* और *वूल्फिया* के उत्पादन की जैव कृषि, पोषण एवं ग्रामीण उद्योगों के लिए स्पाइरुलीना की कृषि; सरोवरों के प्रमुख क्षेत्रों में मिश्रित खेती का प्रारंभ और मात्स्यिकी एस्टेट भी प्रमुख हैं। मोती उत्पादन दूसरी एक उपयोगी प्रौद्योगिकी है।

सरोवरों से उत्पादन बढाये जाने का परिवेश अत्यंत प्रत्याशाजनक है। नदी आवास तंत्र और नदी तटों के विकास के लिए नीतियों में परिवर्तन लाना आवश्यक है। जैव विसर्ज्यों का चुनः चक्रण, रूपाइत खेतों में कार्प और शिंगटियों का हाइ-टेक उत्पादन, मोती उत्पादन और पंजर पालन द्वारा जलजीव कृषि को लघु पैमाने उद्योग की ओर मोड दिया जा सकता है तद्वारा पोषण, खाद्य और अर्थिक दृष्टि से कमज़ोर लोगों को खाद्य सुरक्षा भी सुनिश्चित की जा सकती है और बडी बडी स्थापनाओं को उच्च मूल्य वाले जलीय उत्पादों के निर्यात के लिए प्रोत्साहन दिया जा सकता है।

इन बातों के बारे में राष्ट्रीय अवबोध जगाने और जलीय संपदाओं के परिरक्षण तथा विकास के लिए एकीकृत और बहु संस्थानीय प्रयास आज कल तीव्र गति से हो रहा है। इस से उत्पादों का विकास, पैकेज, पोषणयुक्त खाद्यों का विपणन और कम खर्च पर आर्थिक दृष्टि से कमज़ोर लोगों की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित हो जाने के साथ जीविका चलाने के लिए रोज़गार के अवसर भी प्राप्त हो जायेगा। ■

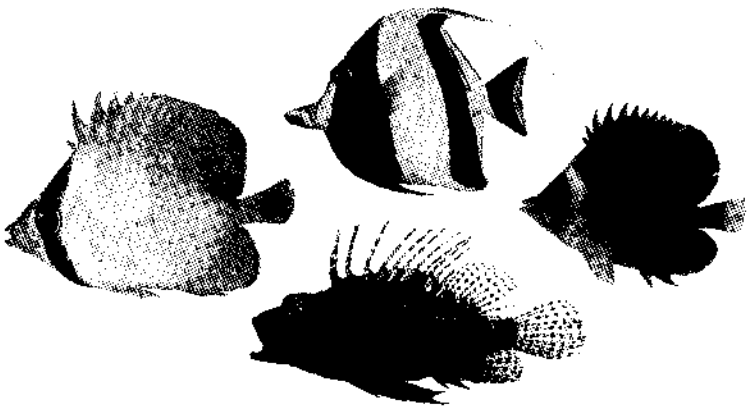

श्रृंगारी मछली

कोचीन में जनवरी 2003 को केरल सरकार द्वारा भारत सरकार के कृषि मंत्रालय के सहयोग से चलाया **अक्वा शो** ने पानी की परियों के परिदृश्यों से नगर में काफ़ी होड मचाई। इन श्रृंगारी मछलियों को देखने और खरीदने केलिए लंबे घंटों तक कड़ी धूप में लोग खडे रहे जो कि एक उभरते हुए शौक और उद्योग का सूचक है।

- हिंदु से साभार

मत्स्य बीज संचयन - जलाशय मात्स्यिकी के विकास का सशक्त आधार

वी. वी. सुगुणन्
केंद्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर

पृष्ठभूमि

भारत में छोटे जलाशयों का अनुमानित क्षेत्रफल 14 लाख 80 हजार हेक्टयर है जो कुल जलाशय संसाधन (30 लाख हेक्टयर) का लगभग आधा है। देश में छोटे जलाशयों का निर्माण मुख्यतः सिंचाई सुविधा के विस्तार हेतु किया गया है एवं ये जलीय श्रोत ग्रीष्म काल में या तो सूख जाते है अथवा इनका जल स्तर इतना कम हो जाता है कि इनमें प्रजनक मछलियों द्वारा प्राकृतिक मत्स्य बीज संचयन की सम्भावना नहीं के बराबर रहती है। अतः इन जलाशयों में मात्स्यिकी प्रबन्धन हेतु बाहर से मत्स्य अंगुलिकाओं का संचयन अनिवार्य हो जाता है ताकि मत्स्य उत्पादन दर में बढ़ोतरी लायी जा सके। इस पद्धति द्वारा जलाशय विशेष के उत्पादन क्षमता से भी अधिक मत्स्य उत्पादन लिया जा सकता है।

छोटे जलाशयों की मात्स्यिकी को सार्थक बनाने हेतु संचय किए जाने वाले मत्स्य प्रजातियों के चयन में सावधानी बर्तन की आवश्यकता होती है। केवल उन मत्स्य प्रजातियों की अंगुलिकाओं का ही संचयन करना चाहिए जिनकी बढ़ोतरी अच्छी हो साथ ही जल विशेष के विभिन्न स्तर में उपलब्ध ऊर्जा के प्रत्येक आयाम का यथायोग्य उपयोग हो सके एवं अधिक से अधिक उत्पादन मिल सके। विश्व स्तर पर इस पद्धति द्वारा जलाशय मात्स्यिकी प्रबन्धन को मान्यता प्राप्त है क्योंकि छोटे जलाशयों के प्रबन्धन में मत्स्य अंगुलिकाओं का संचय पर आधारित मात्स्यिकी प्रबन्धन से इनकी उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में काफी सहायता मिलती है। लेकिन मत्स्य अंगुलिकाओं का संचयन इतना सरल भी नहीं है क्योंकि इसके लिए अनेक प्राचलों का आकलन आवश्यक है। यथा, पारिस्थितिकी विशेष की जैविक क्षमता, आवश्यक मत्स्य प्रजातियों की बढ़ोतरी दर एवं जल विशेष में भक्षकों की अवस्था तथा अन्य प्रकार के दबावों के परिप्रेक्ष में मत्स्य समुदाय में आवश्यक घनत्व।

संचयन के मुख्य उद्देश्य

जलाशयों में मत्स्य अंगुलिकाओं के संचयन की पृष्ठभूमि में प्रमुखतः चार उद्देश्य होते हैं। यथा:

मत्स्य प्रजाति अथवा समुदाय की क्षतिपूर्ति हेतु संचय

विभिन्न कारणों से जलाशयों में हुए मत्स्य संख्या क्षति को पूर्ण करने के लिए उपयुक्त मत्स्य अंगुलिकाओं का संचय किया जाता है। इस प्रकार का संचय अकसर जलाशय के गतिशील भाग यानी नदी की ओर किया जाता है। अनेक देशों में इस प्रकार का संचय आवश्यक है, विशेषकर उन परिस्थितियों में जब किसी नदी पर बाँध के निर्माण से प्रजाति विशेष को क्षति पहुँची हो अथवा पहुँचने की सम्भावना है।

मत्स्य उत्पादन बढ़ाने हेतु संचय

मत्स्य उत्पादन बढ़ाने हेतु किए जाने वाले संचय को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि इसका सीधा सम्बन्ध सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान से होता है। इस प्रकार के संचय का प्रमुख उद्देश्य होता है प्राकृतिक रूप से प्राप्त मत्स्य उत्पादन से अधिक उत्पादन लेना। इस प्रकार

के संचय को तब किया जाना लाभदायक है जब उस जल क्षेत्र पर आधारित मत्स्य जीवी यह अनुभव करने लगे कि मात्स्यिकी की गुणवत्ता तथा उपलब्धता में उल्लेखनीय गिरावट आ गयी है। वैसे, अधिकतर जलाशयों में मछलियों के लिए उपलब्ध प्राकृतिक भोजन या तो बिल्कुल ही उपयोग नहीं हो पाते है अथवा उनका आंशिक उपयोग ही हो पाता है। अतः इस अवस्था में ये जलाशय बृहत मत्स्य समुदाय का भार वहन कर सकते है जो वर्तमान में नहीं हो रहा है।

मत्स्य पालन आधारित मात्स्यिकी प्रबन्धन हेतु संचय

मत्स्य पालन आधारित मात्स्यिकी विकास का प्रमुख उद्देश्य है 'संचय' तथा 'पुनःग्रहण'। यानी, उपयुक्त मत्स्य प्रजातियों की अंगुलिकाओं को संचय कर प्राकृतिक रूप से उपलब्ध आहार का समुचित उपयोग के माध्यम से उत्पादकता में बढ़ोतरी। मत्स्य पालन-सह-मत्स्य ग्रग्रहण की सार्थकता इस बात पर निर्भर करेगी कि कम से कम समय में अधिक से अधिक मछलियों का पुनःग्रहित किए जा सके।

नई मात्स्यिकी के विकास हेतु संचय

इस प्रकार के संचय में प्रमुखतः मत्स्य प्रजातियों के प्रकार में बढ़ोतरी की जाती है ताकि पारिस्थितिकी विशेष का समुचित उपयोग किया जा सके। विदेशी मूल की मत्स्य प्रजातियों का संचय इसी सिद्धांत को ध्यान में रख कर किया जाता है।

चित्र-1 तथा 2 में सार्थक संचयन के प्रारूप दिए गए है।

संचय के सिद्धांत

संचय करने के पूर्व जल विशेष की पारिस्थितिकी का समुचित अध्ययन करना आवश्यक है ताकि संचयन का समुचित लाभ मिल सके। इस दिश में उत्पादन क्षमता का आकलन, संचय से होने वाले सम्भावित क्षति का आकलन, पारिस्थितिकी विशेष के विभिन्न पहलुओं की पूर्ण जानकारी, विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के बीच खींच-तान की सम्भावनाएँ, मत्स्य बीज की समुचित उपलब्धता आदि पर ठोस अध्ययन करने की आवश्यकता है।

संचय हेतु मत्स्य प्रजातियों का चयन

संचय हेतु मत्स्य प्रजातियों के चयन में निम्न बातों का ध्यान में रखना आवश्यक है:

संचयित प्रजाति पारिस्थितिकी विशेष के अनुकूल हो ताकि इसके रख-रखाव, प्रजनन और विकास में कठिनाई नहीं हो।

संचयित प्रजाति तेजी से बढ़ने वाली हो एवं प्राकृतिक रूप से उपलब्ध आहार का अधिक से अधिक सेवन कर सके।

संचय हेतु वनस्पति प्लवक भोजी मत्स्य प्रजातियाँ अधिक उपयोगी पायी गयी है, क्योंकि इनकी खाद्य-श्रृंखला अपेक्षाकृत छोटी होती है।

उपयुक्त मत्स्य प्रजातियों को उतनी ही संख्या में संचयित की जानी चाहिए जितने के लिए संसाधन विशेष में उपलब्ध प्राकृतिक आहार पूर्ण रुप से उपलब्ध हो सके ताकि संचयित मत्स्य अंगुलिकाओं का सही विकास हो सके।

मत्स्य उत्पादन के लक्ष्य को ध्यान में रख कर संचय किये जाने वाली अंगुलिकाओं के आकार को निर्धारित किया जाना आवश्यक है।

संचय के लिए आवश्यक मत्स्य बीज की समुचित उपलब्धता सुनिश्चित होनी चाहिए एवं इसमें लागत भी अधिक नहीं होनी चाहिए।

मत्स्य बीज संचय एवं प्रबन्धन में आने वाली लागत मत्स्य उत्पादन से प्राप्त आमदनी की आधी या उससे कम होनी चाहिए।

70 के दशक से पूर्व जब कार्प मत्स्य बीज उत्पादन सम्बंधी तकनीक का विकास नहीं हुआ था तो नदियों में

उपलब्ध प्राकृतिक मत्स्य बीज ही जलाशयों में संचयित किए जाते थे। इस संदर्भ में दक्षिण के जलाशयों में पुठिया प्रजातियाँ, लेबियों फिमब्रीट्स, सिरहिनस सिरोहा एवं इसकी अन्य प्रजातियाँ, इट्रोप्लस सुराटेनसिस तथा मेगालापस साइप्रिनोइड्स के बीजों को नदियों तथा ज्वारनदमुखों से प्रग्रहित कर जलाशयों में संचय किया जाता था। गंगा तल क्षेत्र के जलाशयों में मुख्यतः नदियों से प्रग्रहित भारतीय कार्प मूल के बीज संचयित किए जाते थे। कालांतर में मत्स्य बीज उत्पादन के विकास से यह कार्य काफी सुलभ हो गया है और वर्तमान में भारतीय तथा अनेक विदेशी मूल की मत्स्य प्रजातियों का प्रजनन सहजता से किया जा सकता है एवं सालों भर मत्स्य बीज प्राप्त किए जा सकते है। भारत के जलाशयों में तिलेपिया तथा कॉमन कार्प नामक विदेशी मूल की मत्स्य प्रजातियों को भी अजमाया गया है। परंतु निराशा ही हाथ लगी है और इसलिए इन दोनों प्रजातियों का संचयन लगभग बंद कर दिया गया है। भारतीय कार्प इस दिशा में सर्वोत्तम पायी गयी हैं, क्योंकि एक तो ये तेजी से बढ़ती है साथ ही उपलब्ध प्राकृतिक आहारों का सुगमता से उपयोग भी करती है।

छोटे जलाशयों में मत्स्य पालन पर आधारित मात्स्यिकी प्रबन्धन के अनेक पहल हैं। जैसे, बढ़ोतरी दर, प्राकृतिक मृत्यु दर एवं शिकार संबंधी मृत्यु दर। अतः इस प्रकार के प्रबन्धन की सफलता संचय घनत्व, संचय आकार, शिकार के समय आकार, शिकार संबंधी मृत्यु दर और शिकार नियमन पर निर्भर करता है। अभी तक इन बातों पर यथायोग्य ध्यान नहीं दिया जा सका है।

उत्तम तथा लाभकारी मात्स्यिकी प्रबन्धन का प्रमुख उद्देश्य होता है जलाशय विशेष में उपलब्ध प्राकृतिक आहारों का समुचित उपयोग कर मत्स्य मांस में परिवर्तन। अतः आवश्यक है कि जलाशयों में मत्स्य अंगुलिकाओं का समुचित संचयन हो ताकि उत्पादन दर में आशानुकूल वृद्धि लायी जा सके।

संचयन दर

संचयन दर का निर्धारण जल विशेष की गुणवत्ता के आधार पर किया जाना चाहिए। हालांकि कुछ बातें प्रत्येक जलाशय के लिए समान रूप से लागु होती हैं जैसे बीज का आकार, जलाशय में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध मत्स्य समुदाय, जलाशय में भक्षक प्रजातियों की अवस्था, शिकार हेतु प्रयास, बाजार द्वारा ग्रहण करने योग्य आकार, आदि। निम्न उद्घृत फॉरमूला के माध्यम से संचयन दर निर्धारित किया जा सकता है:

$$\text{क} = \left[\frac{\text{अ x ब}}{\text{म}}\right] \text{इ}^{\text{ज}} (\text{टी}_2 - \text{टी}_1)$$

क = संचय के लिए आवश्यक संख्या (संख्या/हे.)

अ = जलाशय की वार्षिक उत्पादन क्षमता

ब = प्रजाति विशेष से प्राप्त होने वाला सम्भावित उत्पादन

म = प्रग्रहण के समय मछलियों का औसत वजन

टी_2 = प्रग्रहण के समय मछलियों की उम्र

टी_1 = संचयन के समय मछलियों की उम्र

भारत के कुछ छोटे जलाशयों में संचय आधारित मात्स्यिकी के अच्छे परिणाम देखने को मिले हैं। कर्नाटक में स्थित मारकोनहाली में युक्तिसंगत मत्स्य बीज संचयन के परिणाम स्वरूप भारतीय कार्प मछलियों की उपलब्धता में 61% हो गयी है। साथ ही मत्स्य उत्पादन में 63 किलो/हे. की वृद्धि हुई है। इसी प्रकार केरल के मीनाकारा तथा चुलियार जलाशयों की उत्पादकता 9.96 किलो/हे. तथा 107 किलो/हे से बढ़कर 32.3 कि./हे. तथा 316 किलो हो गयी है। युक्तिसंगत मत्स्य बीज संचयन के परिपेक्ष में उत्तर प्रदेश के बछरा, बागला तथा गुलेरिया जलाशयों के मत्स्य उत्पादन में भी उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है जो सटिक प्रबन्धन विशेष कर समुचित मत्स्य बीज संचयन का ही परिणाम है (सारणी-I)।

सारणी-I छोटे जलाशयों के मत्स्य उत्पादन में बढ़ोतरी

जलाशय	राज्य	संचय दर (संख्या/हे.)	उत्पादन दर (किलो/हे.)
अलियार	तमिलनाडु	35	19.4
त्रिमूर्ति	तमिलनाडु	435	182
मीनाकारा	केरल	1226	107
चुलियार	केरल	937	316
मारकोनहाली	कर्नाटक	922	63
गुलेरिया	उत्तर प्रदेश	517	150
बछरा	उत्तर प्रदेश	763	140
बागला	उत्तर प्रदेश	-	102
बंद-बेराथा	राजस्थान	164	94

आन्ध्र प्रदेश के 40 जलाशयों में किए गए अध्ययन में मत्स्य उत्पादन तथा मत्स्य बीज संचयन के बीच सीधा सम्बन्ध देखने को मिला है। ऐसा भी देखने को मिला है कि जिन जलाशयों में संचय दर युक्तिसंगत था उनसे उत्पादन भी अधिक मिला।

संचयित मत्स्य समुदाय की रक्षा

भारतीय मूल की कार्प मछलियों में अकसर जलाशय के जल निकास द्वार की ओर जमा हो जाने की प्रवृत्ति पायी जाती है और इस प्रकार अनेक प्रजनक मछलियाँ जलाशय से बाहर चली जाती है, जो जलाशय मात्स्यिकी प्रबन्धन में एक गंभीर समस्या है। इससे भी अधिक गंभीर समस्या है मत्स्य अंगुलिकाओं तथा बड़ी मछलियों का नहर के माध्यम से बाहर निकल जाना। अतः इस प्रकार के जलाशयों के मात्स्यिकी प्रबन्धन हेतु जहाँ-जहाँ से जल का निकास सम्भव है वहाँ वहाँ जाली लगाना आवश्यक हो जाता है। समय समय पर लगाए गए जालियों को साफ करना भी आवश्यक है अन्यथा शैवाल के पनपने से इनके छिद्र बन्द हो सकते है और जलाशय के जल निकासी में बाधा पहुँच सकती हैं। अतः जलाशयों में संचयित मत्स्य समुदाय को बचाने हेतु सबसे कारगर उपाय है सितम्बर-अक्तूबर महीनों में मत्स्य अंगुलिकाओं का संचय एवं जून आते-आते उनका अधिक से अधिक प्रग्रहण। वैसे यह उपाय तभी कारगर हो सकती जब 8-10 महीनों में संचयित मत्स्य अंगुलिकाओं की समुचित बढ़ोतरी हो जाय ताकि उनको बाज़ार में बेचा जा सके।

मत्स्य प्रजातियों के प्रकार में बढ़ोतरी

नदियों पर बाँध के निर्माण का सीधा प्रभाव मत्स्य प्रजातियों पर पड़ता है एवं जलाशयों में अकसर इनकी विविधता कम हो जाती है। वैसी स्थिति में तेजी से बढ़ने वाली एवं पारिस्थितिकी विशेष में उपलब्ध ऊर्जा श्रोतों के अनुकूल मत्स्य प्रजातियों को बाहर से संचय आवश्यक हो जाता है। इस प्रक्रिया को मत्स्य प्रजातियों के प्रकार में बढ़ोतरी कहा जाता है। छोटे जलाशयों में इस प्रक्रिया द्वारा मत्स्य उत्पादन में वृद्धि एक आजमाई हुई विधा है। लेकिन चूँकि छोटे जलाशयों में संचयित अधिकतर मछलियों को प्रग्रहित कर लिया जाता है। अतः बड़े जलाशयों में इस प्रकार के प्रबन्धन की अधिक आवश्यकता है ताकि स्थानीय प्रजनन को प्रोत्साहित कर प्राकृतिक मत्स्य बीज संचयन की दिशा में कदम बढ़ाया जा सके।

मत्स्य पालन आधारित मत्स्यिकी हेतु "मॉडलिंग" की सार्थकता

हाल के वर्षों में छोटे जलाशयों के मात्स्यिकी विकास

चित्र 1 - संचयन के सिद्धांत

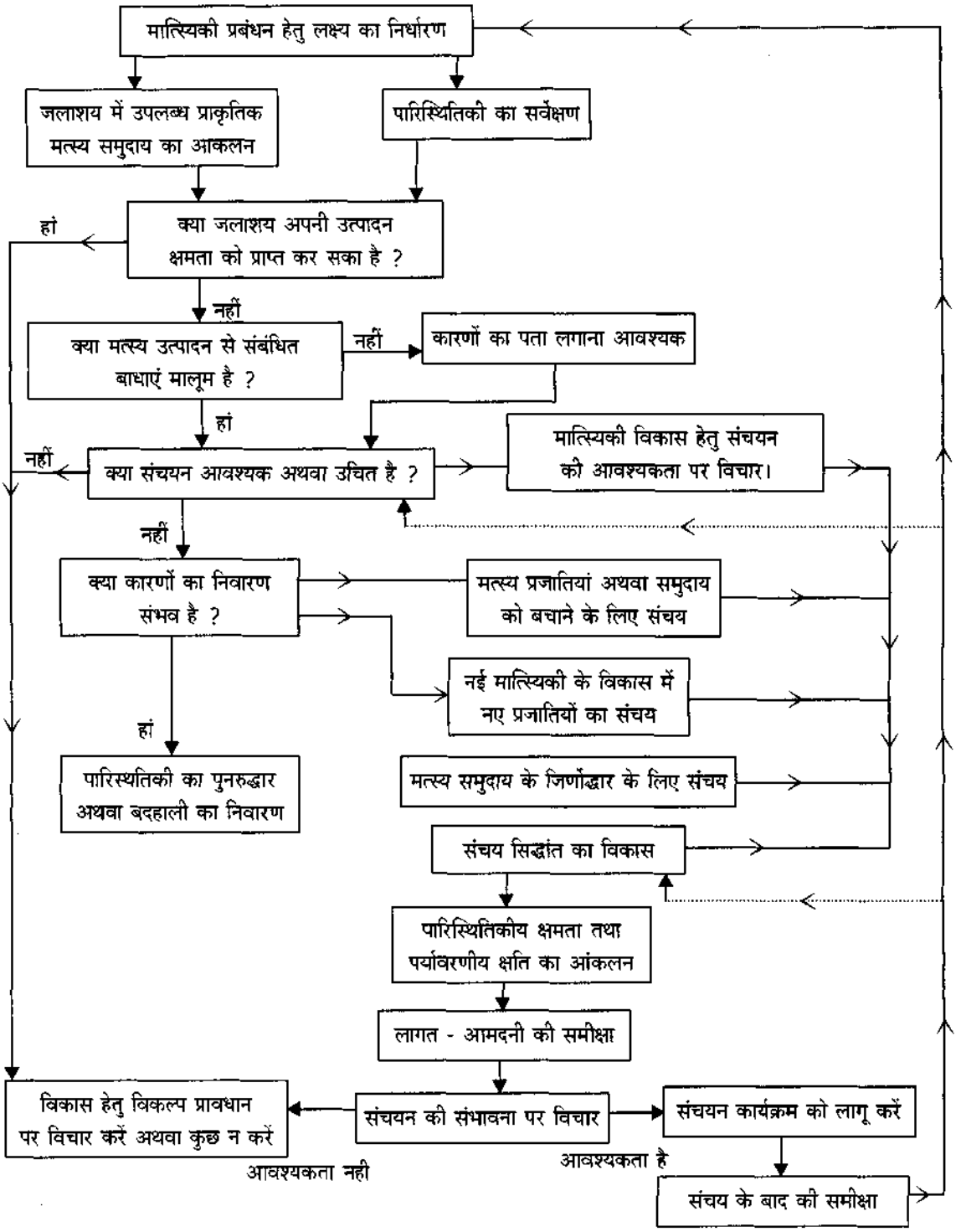

चित्र 2 - संग्रहण में आने वाली संसाधन संबंधी समस्यायें

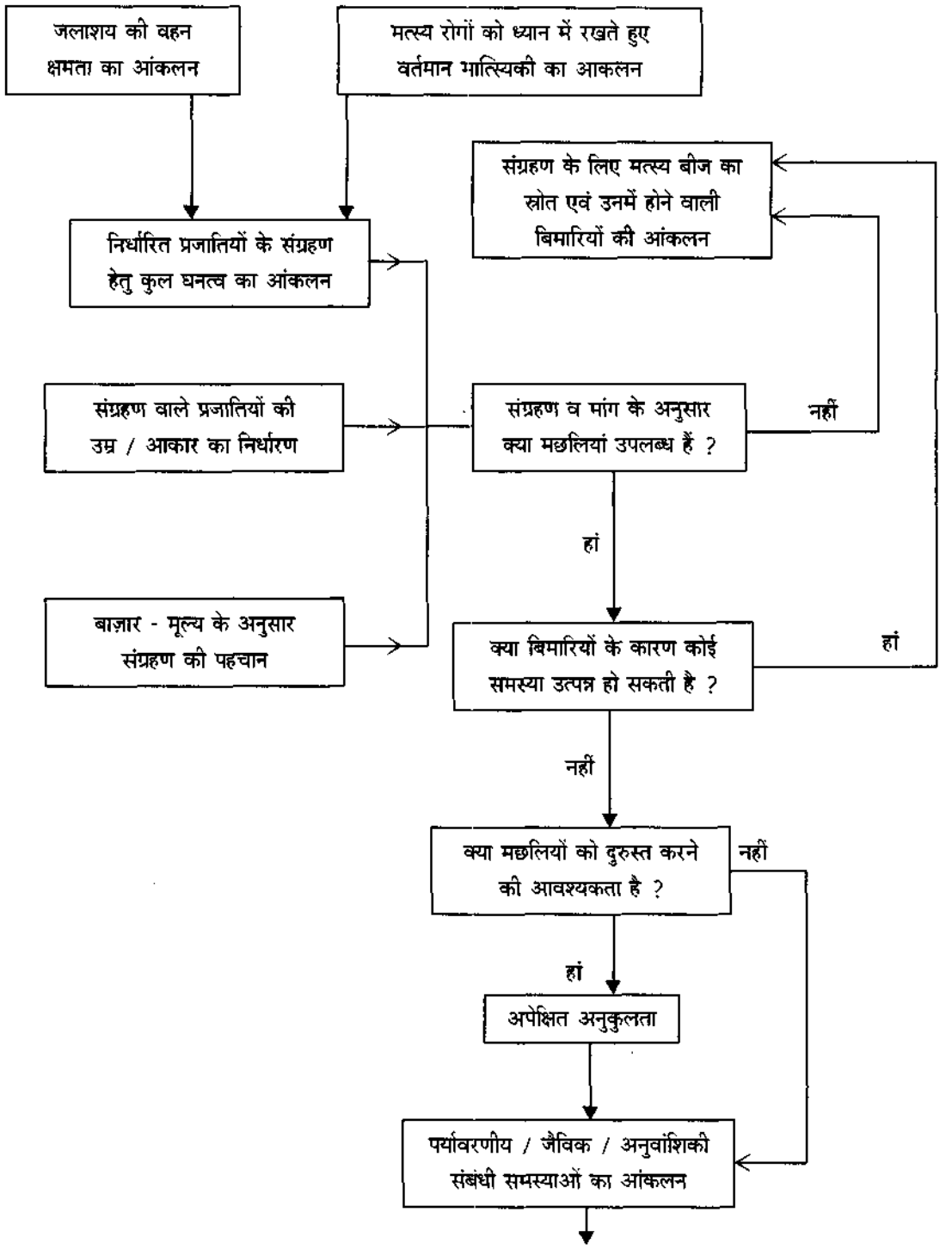

हेतु मॉडलिंग परिनियम की सार्थक भूमिका देखने को मिली है। इस प्रकार के मॉडल में संतुलित मत्स्य बीज संचयन पर विशेष जोर दिया जाता है क्योंकि अति संचयन से उत्पादन बढ़ने के बजाय घटता है। यह तो सर्व विदित है कि अगर छोटी जगह में आवश्यकता से अधिक मछलियों के जमाव से उनकी बढ़ोतरी बाधित हो जाती है। साथ ही मृत्यु दर में भी तीव्रता आ जाती है।

इस मॉडल से यह स्पष्ट है कि उत्पादन का सीधा सम्बन्ध मृत्यु दर एवं मत्स्य बीज संचयन के घनत्व से होता है। यानी घनत्व आधारित बढ़ोतरी, आकार आधारित मृत्यु एवं भार-सह-लम्बाई इस मॉडल के प्रमुख आधार हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि सबसे अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए बाजार में बिकने लायक कम से कम लम्बाई की मछली पैदा की जाय न कि बहुत बड़े आकार की मछलियों के उत्पादन हेतु जलाशय में उपलब्ध प्राकृतिक ऊर्जा को अनावश्यक रुप से नष्ट किया जाय।

छोटे जलाशय में मात्स्यिकी विकास की अत्यधिक सम्भावनाएँ है एवं इस प्रकार की मात्स्यिकी विकास से 100 करोड़ रुपये से भी अधिक की आमदनी देश को मिल सकती है। साथ ही लाखों लोगों को रोजगार भी मुहैया कराया जा सकता है। मत्स्य पालन की तुलना में इसमें लागत भी कम आता है एवं मुनाफा भी कई गुणा अधिक होता है।

जलाशय संसाधनों के मात्स्यिकी उत्पादन दर बढ़ाने के लाभ मात्र कुछ लोगों तक ही सीमित नहीं रहता अपितु इसका लाभ जनमानस के एक बड़े समुदाय तक पहुँचता है। जलाशय मात्स्यिकी विकास में तेजी इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि समय के साथ मत्स्य पालन में हो रहे लागत में निरंतर बढ़ोतरी हो रही है जो गरीब तथा सिमांत कृषकों के हक में नहीं हैं। पुनः सघन मत्स्य पालन से पर्यावरण को भी खतरा है जो जलाशय मात्स्यिकी में बिलकुल ही नहीं है। ■

जैव चिकित्सा

पिछले बीस वर्षों में जलकृषि के क्षेत्र में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। मीठा पानी मछली और झींगों के अतिरिक्त समुद्री मछलियों, चिंगटों और कवच मछलियों का पालन अब बढ गया है। हाल में सब से अधिक पालन होनेवाली संपदा है पेनिआइड झींगा जिसका पालन 60 से ऊपर देशों में हो रहा है। वर्धित चिंगट पालन के साथ बाक्टीरिया व वैरसों से होनेवाले रोग हमारी चिंता का विषय बन गया है। जलकृषि में जैव चिकित्सा सफल देखा गया है। जैव प्रौद्योगिकी में यह शाखा *बयोरमेडियेशन* नाम से जाना जाता है जिस में पानी के परिष्कार केलिए प्रोबयोटिक्स और एनज़ाइमों का प्रयोग होता है।

- रोज़गार समाचार से साभार

पश्चजल मछली पालन

एल. कृष्णन
केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

हमारे तटीय समुद्र का मछली उत्पादन अब ऐसी अवस्था तक पहुँच गया है कि इसको बढ़ावा नहीं किया जा सकता। भारत का वार्षिक मछली उत्पादन लगभग 2.7 दश लाख टन है जिसका 25% केरल के तटों से मिलता है। कई प्रकार की गणनाओं और अध्ययनों से हमें यह सूचना मिलती है कि भविष्य में मछली उत्पादन की दर में किसी भी प्रकार की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है। इस परिस्थिति में मछली मेखला में उत्पादन बढ़ाने हेतु अन्य तरीका ढूँढ़ना आवश्यक पड गया है। इस संदर्भ में पश्च जल मछली पालन की ओर ध्यान आकर्षित हो गया।

तीन रीतियों में मत्स्य और मत्स्येतर जीवों का पालन उपयोगी बन जाता है:

1) तटीय गाँवों के लघु पैमाने के मछुआरों को आय बढ़ाने का मार्ग

2) गरीब लोगों के बीच दिखाई पड़ने वाली पोषण की कमी का कम लागत में निवारण

3) देश की विदेशी मुद्रा आय में उल्लेखनीय बढ़ती

केरल में लगभग 13,400 हेक्टयर क्षेत्र में परम्परागत और अन्य प्रकार के झींगा - मछली पालन किए जाते हैं। ये सभी पालन हमारे तटीय क्षेत्रों के पश्चजल झीलों, निम्न भागों और अन्य कृत्रिम झीलों में किए जाते हैं। केरल के प्रमुख परम्परागत झींगा खेत, जिनमें पोक्काली नामक चावल की खेती भी शामिल है, मुख्यतः एरणाकुलम जिला में और भागिक रूप से तृश्शूर, कोट्टयम, आलप्पुष़ा, कोल्लम और कण्णूर जिलाओं में फैले गए हैं। परम्परागत झींगा पालन खेतों के अतिरिक्त बारिश के समय खेतों में और कृत्रिम झीलों में पश्चजल मछलियों का पालन भी किया जाता है।

मुगिल सेफालस, मल्लेट, चैनोस चैनोस, एटरोप्लस, पेर्चस, ग्रूपर आदि पश्चजल पालन के लिए अनुयोज्य मछलियाँ हैं। इन्हें अकेले रूप से या मिश्रित रूप से पालन किया जाता है। पालन करने योग्य छोटी मछलियों को समुद्र तटों के निकटस्थ कच्छे क्षेत्रों, पानी भरे हुए निम्न भू भागों से निमज्जन जाल (dipnet), कास्ट नेट आदि के सहारे से संग्रहण करके झीलों में संभरण किया जाता है। साधारणतया ये मछलियाँ झीलों में प्राकृतिक रूप से होने वाली खाद्यवस्तुओं को खाती हैं। बहुत अधिक मछुआ लोग पश्च जल मछली पालन करते हैं लेकिन शास्त्रीय ढंग से पालन करने वाले बहुत कम हैं।

परम्परागत झींगा पालन प्रणाली में कई त्रुटियाँ व्यक्त होने पर झींगों के लिए राष्ट्रीय तथा अंतराष्ट्रीय तौर पर बढ़ गई मांग को मानते हुए नई और शास्त्रीय ढंग की पालन रीतियाँ विकसित की गई। इसी प्रकार झींगा कृषि विकसित होकर भारत के मछली उत्पादन की नींव की हड्डी बन गई। इस वज़ह से विदेशी मद्रा में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

झींगा पालन में हुए तेज़ विकास के साथ साथ कई नए तथा जीवन के लिए हानिकारक रोग भी होने लगे, ये रोग सभी झींगा पालन खेतों में फैलकर पूरा झींगा उद्योग खतरनाक अवस्था तक पहुँच गया।

झींगा पालन में होने वाली इस प्रकार की समस्याओं और पालन में हुई नष्ट के कारण कई मछुए लोग मछली पालन प्रणालियों की ओर मुड गए। इसके लिए और एक कारण भी था। झींगा रोगों के हल का और एक मार्ग झींगा खेत को कुछ भी खेती न करके शुष्क रूप से डालना है। इस तरह खेत को बंजर करने के बदले खेत में मछली पालन करने पर इस से कुछ लाभ होता है।

आजकल पालन के लिए छोटी मछलियों को प्राकृतिक रूप से संग्रहण करने की अवस्था है क्योंकि समुद्री - पश्चजल मछलियों के उत्पादन के लिए औद्योगिक तौर पर कोई भी स्फुटनशाला (हैचरी) स्थापित नहीं हुई है।

केरल कृषि विश्वविद्यालय के अधीन कार्यरत पुतुवैप (स्थान का नाम) मात्स्यिकी स्टेशन में समय समय पर मिलने वाली पालन योग्य छोटी मछलियों का संग्रहण करके सरकार की दर पर बिक्री किया जाता है जो एक सराहनीय काम है। इसी तरह प्राकृतिक रूप से छोटी मछलियों को संग्रहित करके बेचने वाले मछुए लोग भी इन स्थानों में ज़्यादा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंदर सी एम एफ आर आइ, सी आइ बी ए आदि संस्थान पालन के लिए अनुयोज्य पश्चजल-समुद्री मछलियों के उत्पादन पर अनुसंधान करते रहते हैं। मुगिल सेफालस, पेर्च, मल्लट, ग्रूपर, एटरोप्लस आदि मछलियों के उत्पादन पर किए गए परीक्षण सफल भी हो गए हैं।

झींगा पालन के आगे का विकास अब संकट की स्थिति पर है। ऐसी स्थिति में लाभदायक, सरल और शास्त्रीय ढंग से करने योग्य पश्चजल मछली पालन की प्रणालियों के बारे में जानकारी प्राप्त होना आवश्यक बन गया है। इस के अतिरिक्त मछली की पोषण की गुणता पर अवबोध होने पर मछली पालन की ओर लोग प्रेरित हो जाते हैं।

पश्चजल मछली पालन कई प्रकार किया जा सकता है। कई जातियों की मछलियों को एक साथ पालन करने की मिश्रित पालन रीति इसका एक उदाहरण है। इस तरह के पालन के लिए ऐसी मछलियों को चुनना चाहिए कि ये आवास, भोजन एवं प्रजनन के लिए आपस में आक्रमण नहीं करती हैं। मिश्रित पालन से कम अवधि में अच्छा उत्पादन मिलता है। एक ही मछली जाति को निश्चित अवधि तक पालन करने की 'एकल संवर्धन' (Mono-culture) प्रणाली मुगिल सेफालस जैसी पश्च जल मछलियों के लिए अनुयोज्य है। कुछ विशेष जाति मछलियों जैसे कलवा, ग्रूपर, पेर्च आदि को अलग अलग पंजरों में डालकर पालन करने की रीति को 'पंजर संवर्धन' (Cage Culture) कहा जाता है। विस्तृत और कम गहराई के तटीय क्षेत्रों में करने योग्य पालन रीति है 'पेन कल्चर'। इस की विशेषता यह है कि खजूर पेड, बाँस या तम्बाकू की लकड़ियों के लंबे और पतले खंभों को जाल की तरह बांधकर मछली पालन के लिए स्थान अलग किया जाता है और इन स्थानों में छोटी मछलियों को संग्रहित करके पालन किया जा सकता है। सरल ढंग का पश्चजल मछली पालन नारियल बाग में होने वाली नालियों के पानी में किया जा सकता है। बहुत अधिक उत्पादन मिलने वाली और एक पालन प्रणाली है संयोजित मछली पालन प्रणाली। इस में मछली पालन के साथ साथ गाय, भैंस, सुअर, मुर्गी, बतख आदि का पालन, बागवानी और तरकारी की कृषि संयुक्त करके की जा सकती है जिससे अधिक लाभ भी मिल जाता है।

ऊपर बताई गई पालन प्रणालियों से 2000-3000 कि. ग्रा. तक का संग्रहण मिल सकता है। इन सब के अतिरिक्त तटीय समुद्र से मछली उत्पादन कम होने और मछुआ लोगों के काम दिवस और काम का अवसर कम होने की आज की परिस्थिति में, झींगा उद्योग वर्तमान में सामना करने वाले प्रतिबंधों के समाधान के लिए और परंपरागत मछुआ लोगों, मछुआ महिलाओं और परिवार के सदस्यों को रोज़गार का अवसर प्रदान करने और तद्वारा आय बढ़ाने के लिए पश्चजल मछली पालन एक अच्छा उपाय है, इसमें संदेश नहीं है। ■

आनुवंशिक अभियांत्रिकी - मात्स्यिकी में खाद्य सुरक्षा की प्रत्याशा

पी. जयशंकर
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

भौगोलिक आबादी की बढ़ती के साथ साथ प्रोटीन के लिए सस्ते स्रोत, विशेषकर जलीय संपदाओं की मांग भी बढ़ती जा रही है। अतिमत्स्यन, आवासों का विनाश एवं प्रदूषण की वजह से प्रग्रहण मात्स्यिकी से मछली उत्पादन उल्लेखनीय ढंग से घट गया और वर्तमान की भौगोलीय परिस्थितियों के अनुसार मछली उत्पादन में आगे की वृद्धि का अंदाज़ा नहीं लगाया जा सकता है। जलजीव कृषि से उत्पादन बढ़ाना ही इस समस्या का सुझाव है और इस के लिए और भी क्षमताशील उत्पादन व्यवस्था विकसित की जानी है।

लगभग 2000 वर्षों पहले चीन और रोम के लोग पालतू मछलियों विशेषकर कार्प मछली की जीन आवृत्ति जैसे विशेषताओं तथा गुणताओं का चयन करके उनका प्रजनन करते थे। तब से लेकर जलजीव कृषि के उत्पादन की गुणता बढ़ाए जाने में आनुवंशिकी (genetics) की महत्वपूर्ण भूमिका व्यक्त हो गई। 1900 के वर्षों में प्रजनन एवं वंशागति (inheritance) की बृहत्तर जानकारी के साथ मत्स्य आनुवंशिकी के कार्यक्रम और भी प्रचलित होने लगे। 1960 के वर्षों में आनुवंशिकी कार्यक्रमों में बढ़ावा होने लगा और 1980 के वर्षों में आणविक जानकारियों के उद्गमन से इन कार्यक्रमों में और भी संवेग होने लगा। हाल ही में आनुवंशिक अभियांत्रिकी (genetic engineering), जिस में नए और रूपांतरित जीन को मछली जीनोम में प्रयुक्त किया जाता है (इसे ट्रान्स्जेनिक्स कहा जाता है), द्वारा आनुवांशिक प्रगतियों की उपलब्धि के लिए प्रयास किये जा रहे है। इसके फलस्वरूप मछली की वृद्धि में तुरंत और प्रकट बढ़ती तथा शास्त्रीय आनुवंशिक विकासों में अनुपलभ्य विशेषकों (traits) (अर्थात आनुवांशिक परिवर्तन न होने वाली विशेषताएं) का परिवर्तन संभव होता है। आनुवंशिक अभियांत्रिकी द्वारा परिवर्तन के लिए विचाराधीन विशेषकों में वृद्धि, पोषण क्षमता, रोग प्रतिरोधता, चरम तापमान की सहायता और पुनरुत्पादन सम्मिलित है।

मत्स्य आनुवंशिक अभियांत्रिकी की प्रगतियाँ

पालमिटर और उनके सहकर्मियों ने वर्ष 1982 में यह निदर्शन किया कि आनुवंशिक अभियांत्रिकी के फलस्वरूप कशेरुकियों की वृद्धि दर में प्रकट मात्रा में बढ़ती हुई और इस के उपरांत मत्स्य आनुवंशिक अभियांत्रिक लोकप्रिय

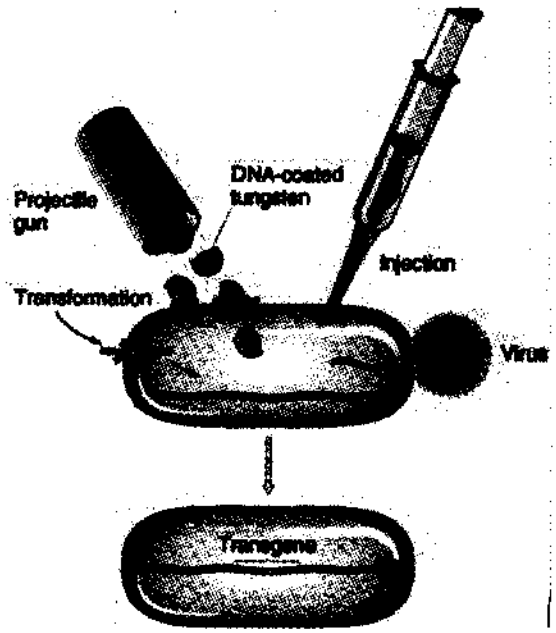

चित्र - 1 ट्रान्स्जेनिसिस - चित्रात्मक विवरण

होने लगी। वांछित गुणताओं वाले प्रभेदों (strains) के विकास के लिए चुनी गई पारंपरिक प्रजनन प्रक्रियाओं की कठिनाइयों के एक विकल्प के रूप में इस तकनीक का प्रस्ताव किया गया। 1990 के अंतिम वर्षों में जलजीवों में जीनोमिक्स तथा जीन चित्रण (gene mapping) का अनुसंधान विस्फोट हुआ। कई मछली जीनों और नियामक अनुक्रमों (regulatory sequences) का पहचान और विलगन किया गया और अब मत्स्य जीनोम और भी विज्ञात बन गया।

जीन स्थानांतरण का सबसे पहला सफल तरीका "आनुवंशिक अभियांत्रिकी" का निष्पादन वर्ष 1985 में चीन में हुआ और इसके बाद कई अन्य देशों में भी इस तरीके का सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया। अधिकांश कार्य वृद्धि (आकार तथा दर) के होर्मोनों के विकास को केंद्रित करके किया गया। पहले किए गए परीक्षणों के आधार पर ट्रान्स्जेनिक मछलियों में (अट्लान्टिक साल्मन) वृद्धि को बढ़ावा देने के लिए स्तनी जीन और मछली वृद्धि के कारक होर्मोण का प्रयोग अट्लान्टिक साल्मन को शीत जल में होने वाले तापमान परास (temperature range) बढ़ाने के लिए इस में विन्टर फ्लौन्डर मछली की एन्टीफ्रीज़ प्रोटीन जीन का प्रयोग किया गया था। स्तनियों की अपेक्षा मछलियों में ट्रान्स्जीनों का आसान से प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि मछली अंडों का बाहरी निषेचन, अंडाणु (ova) के संग्रहण के तकनीकों की कठिनाइयों का निवारण, उनका निषेचन और भ्रूण (embryo) को धात्रेय मादा (foster mother) में स्थापित करना मछलियों में स्तनियों से ही आसान से किये जा सकते हैं। इस आसान तरीके से कई मछली जातियों का संवर्धन किया गया है जिनका जननकाल (generation time) बहुत छोटा था। पालन पशुओं में ट्रान्स्जेनिक की सफलता एक फीसदी से कम देखी गई है बल्कि मछलियों में 10-70% सफलता की रिपोर्ट की गई है।

ट्रान्स्जेनिक उत्पादन के लिए जातियों का चयन

अध्ययन का स्वभाव और सुविधाओं की उपलब्धता के आधार पर अनुयोज्य मछली जातियों का चयन किया जाना चाहिए आजकल खाद्य सुरक्षा एक प्रमुख समस्या है और ट्रान्स्जेनिक उत्पादन के लिए मुख्य भारतीय कार्प, कोमन कार्प, चाइनीस कार्प, चैनल कैटफिश, सालमन, ट्राउट और तिलापिया जैसे खाद्य योग्य मछलियों को केन्डिडेट मछली के रूप में चुन लिया जाना है। कई सूचनाएं प्राप्त हुई हैं कि वर्ष 1980 के अंतिम वर्षों से लेकर अट्लान्डिक सालमन, ट्राउट, कोमन कार्प, गोल्ड फिश, मेड़ाका, ज़ीब्रा फिश और लॉच मछलियों जैसे ट्रान्स्जेनिक मछलियों के सृजन के प्रयास हुए थे। समुद्री खाद्य मछलियों जैसे ट्यूना, फ्लौन्डर, समुद्री बैस, समुद्री ब्रीम, पोर्गीस और स्ट्राइप्ड बैस

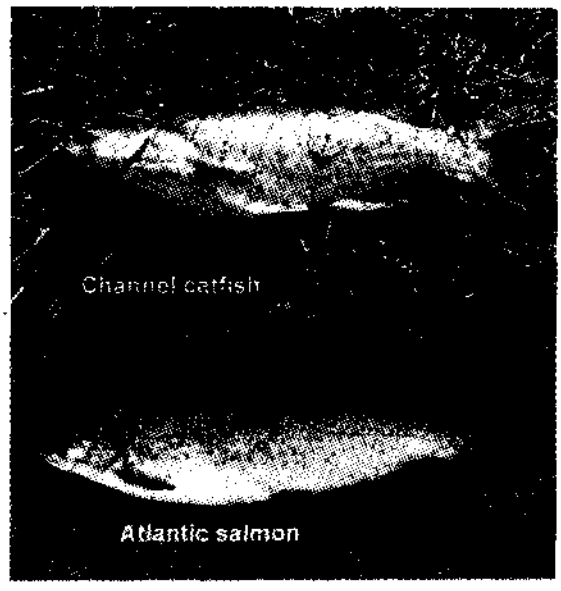

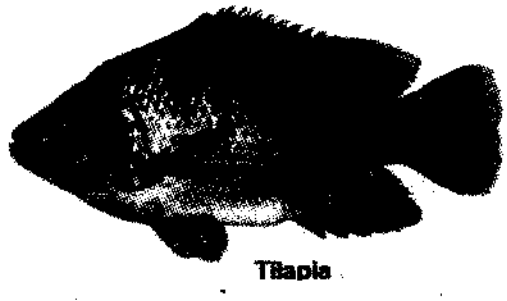

चित्र - 2 ट्रान्स्जेनिक प्रौद्योगिकी सफल हुई कुछ खाद्य योग्य मछलियाँ

में वृद्धि होर्मोन के जीन अनुक्रम का क्लोन किया गया है।

जीन स्थानांतरण की नीति तथा अभिलक्षण

विकसित होनेवाले भ्रूणों के सभी कोशों में ट्रान्स्जीन स्थायी रूप से एकीकृत रहने के लिए वांछित जीनों युक्त जीन ढ़ांचे का प्रयोग किया जाना चाहिए। जीन को मछली भ्रूण में स्थानांतरित करने के लिए कई तरीके जैसे माइक्रोइन्जेक्शन, इलेक्ट्रोपोरेशन, रिट्रोवियल वेक्टर का उपयोग, लिपोफेक्शन तथा एम्ब्रियोनिक स्टेम सेल उपलब्ध हैं। जीन स्थानांतरण के सभी तरीके प्रभावकारी न होने की वजह से सफलतापूर्वक ट्रान्स्जेनिक मछलियों के पहचान के लिए ध्यान से अनुवीक्षण करके अत्यंत उचित तरीका स्वीकार किया जाना चाहिए। ट्रान्स्जीन का अनुकूलन सुनिश्चित करने के लिए डोट/स्लोट ब्लोट विश्लेषण, सथेर्न ब्लोट विश्लेषण और पी सी आर (पोलिमरेस चेइन रियाक्शन) कुछ उचित तकनीक हैं।

ट्रान्स्जेनिक मछली की शक्य आपत्तियाँ

डी एन ए इन्सेर्ट या ट्रान्स्जीन के संदर्भ में डी एन ए का स्रोत मुख्य घटक नहीं है क्योंकि खाद्य के रूप में उपभुक्त डी एन ए का पाचन के दौरान न्यूक्लिएसिस द्वारा जल उपघटन (hydrolysis) हो जाता है। लेकिन अगर ट्रान्स्जीन संक्रामक है तो समस्या बन जाएगी। अर्थात ट्रान्स्जीन की पुनराकृति होने पर परपोषी जीव या प्रभावित जीव पर हानिकारक प्रभाव पड जाएगा। इस के लिए एक सुझाव यह है कि ट्रान्स्जेनिक खाद्य योग्य मछलियों के उत्पादन के लिए नोन-पिसिन (मछली से व्युत्पन्न नहीं) स्वभाव के वैरल या मेटलोथियोनिन वर्धकों का उपयोग नहीं किया जाना है।

अगर एक नया प्रोटीन प्रयुक्त किया जाए या मछली में विद्यमान प्रोटीन का स्तर बढ़ाया जाए तो खाद्य की एलेर्जिनिसिटी की समस्या बन जाएगी। अगर ट्रान्स्जीन का वास्तविक स्रोत की ठीक तरह जाँच नहीं की तो इस से और भी समस्याएं उत्पन्न हो जाएगी। कवच मछली का प्रोटीन टोलियोस्ट मछली में स्थानांतरित नहीं किया जा सकता क्योंकि कवच मछली के प्रति प्रत्यूर्जता (allergy) होने वालों को इस से स्वास्थ्य में हानि होने की गुंजाइश है।

ट्रान्स्जेनिक मछली के स्वास्थ्य पर ध्यान रखना अत्यंत प्रमुखता की बात है। अगर किसी भी प्रकार से ट्रान्स्जेनिक जीव स्वस्थ नहीं है तो खाद्य सुरक्षा के लिए यह आशंकाजनक हो जाएगा। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि जीन उत्पाद से आतिथेय मछली के जीवन चक्र के दौरान उपापचयी या शरीरक्रियात्मक प्रक्रियाओं में प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड जाते है।

यह भी चिंता का विषय है कि सामान्य तौर पर सुरक्षित मछली जाति में शांत जीवविष जीन प्रवेश (quiescent toxingene) होने की संभावना है। इस से ट्रान्स्जीन मछली विषयुक्त जीन, जो आम तौर पर प्रकट नहीं होती, के प्रति प्रभावित होने की साध्यता है। जो भी हो, सामान्य खाद्य योग्य मछली में जीवविष बहिर्जात (exogenous) होता है और मछली जीन द्वारा उत्पादित नहीं है।

ट्रान्स्जेनिक मछलियों को खुले सागर में विमोचन करने पर होने वाले प्रतिघातों पर अभी तक कोई परीक्षण नहीं किया गया है। इस वजह से वर्तमान जानकारी के अनुसार आवास में इनके दीर्घकालीन या अल्पकालीन प्रतिघातों पर भविष्यवाणी करना मुश्किल है। फिर भी, सुरक्षा की दृष्टि से यह सुझाव है कि प्राकृतिक संपदाओं के साथ ट्रान्स्जेनिक मछलियों को पालन करने पर उनके साथ प्रजनन होने की संभावना होने के कारण ट्रान्स्जेनिक मछलियों का अलग रूप से पालन करना अनुयोज्य है।

निष्कर्ष

जलजीव कृषि के विकास के प्रसंग में आनुवंशिक अभियांत्रिकी का आगे का विकास मुख्यतः दो विचारधाराओं पर निर्भर है (क) प्रौद्योगिकी की स्वस्थता और (ख) खाद्य सुरक्षा, वर्तमान में इस क्षेत्र के वाणिज्यीकरण के मार्ग पर जीन स्थानांतरण की क्षमता, जीन अभिव्यक्ति का नियमन जैसे तकनीकी समस्याएं हैं। खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से, अगर ट्रान्स्जीन संक्रामक (infectious) नहीं हो, अगर मछली स्वस्थ हो और अगर ट्रान्स्जीन उत्पाद सुरक्षित हो तो ट्रान्स्जेनिक मछली पैतृक मछली (parental fish) के समान ही सुरक्षित है, इस में संदेह नहीं है। ■

भारत की महाचिंगंट मात्स्यिकी संपदाएं

ई.वी. राधाकृष्णन और मेरी के. मानिश्शेरी
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

आमुख

मूल्यवान और कीमती समुद्री खाद्यों में महाचिंगटों विशेषतः शूली महाचिंगटों का महत्वपूर्ण स्थान है। ये एक प्रमुख निर्यात माल है और हमारे देश में जीवंत अवस्था में भी इसका निर्यात किया जाता है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में इसकी उच्च माँग और आकर्षक दाम आजकल इसका विदोहन बढाने का कारण बन गया है। इस बहुजातीय और-बहु संभार मात्स्यिकी में दोनों, परंपरागत और यंत्रीकृत सेक्टरों का सम्मिलन इसके प्रभावी प्रबन्धन में समस्याएं खडी करती है।

उत्पादन

भारत के वर्ष 1991-2001 अवधि के महाचिंगटों का कुल वार्षिक अवतरण चित्र - 1 में प्रस्तुत किया है। इसकी मात्स्यिकी वर्ष 1965 के 347 टन से 1975 में 2991 टन और 1985 में 4083 टन तक बढ गयी और इसके बाद अब तक का वार्षिक उत्पादन 2400 टन के आसपास उतरते-चढते रहता है।

भारत में महाचिंगटों के अवतरण का गणनीय भाग उत्तर पश्चिम, दक्षिण पश्चिम और दक्षिणपूर्व तटों से आता है। वर्ष 1996-2000 के दौरान गुजरात, और महाराष्ट्र समाविष्ट उत्तरपश्चिम सेक्टर ने कुल अवतरण का 69%

चित्र - 1 भारत में 1991-2001 के दौरान कुल महाचिंगट अवतरण (ट)

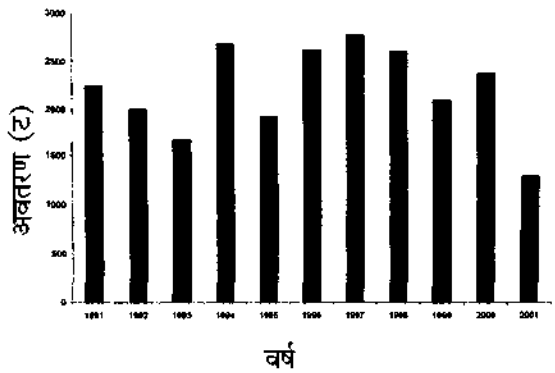

चित्र - 2 गुजरात में 1996-2000 महाचिंगट अवतरण (ट)

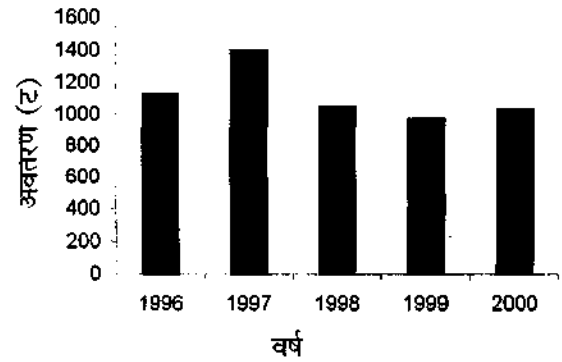

चित्र - 3 महाराष्ट्र में (1996-2000) महाचिंगट अवतरण (ट)

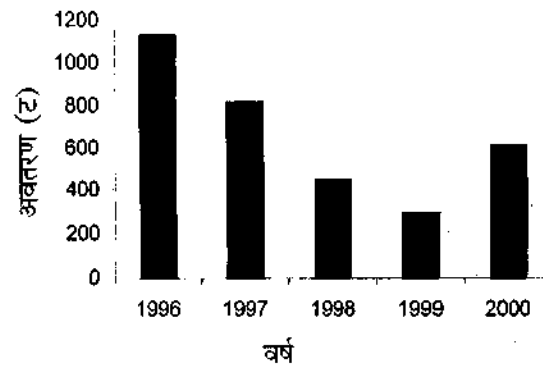

भारत की महाचिंगंट मात्स्यिकी संपदाएं

ई.वी. राधाकृष्णन और मेरी के. मानिश्शेरी
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

आमुख

मूल्यवान और कीमती समुद्री खाद्यों में महाचिंगटों विशेषतः शूली महाचिंगटों का महत्वपूर्ण स्थान है। ये एक प्रमुख निर्यात माल है और हमारे देश में जीवंत अवस्था में भी इसका निर्यात किया जाता है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में इसकी उच्च माँग और आकर्षक दाम आजकल इसका विदोहन बढाने का कारण बन गया है। इस बहुजातीय और-बहु संभार मात्स्यिकी में दोनों, परंपरागत और यंत्रीकृत सेक्टरों का सम्मिलन इसके प्रभावी प्रबन्धन में समस्याएं खडी करती है।

उत्पादन

भारत के वर्ष 1991-2001 अवधि के महाचिंगटों का कुल वार्षिक अवतरण चित्र - 1 में प्रस्तुत किया है। इसकी मात्स्यिकी वर्ष 1965 के 347 टन से 1975 में 2991 टन और 1985 में 4083 टन तक बढ गयी और इसके बाद अब तक का वार्षिक उत्पादन 2400 टन के आसपास उतरते-चढते रहता है।

भारत में महाचिंगटों के अवतरण का गणनीय भाग उत्तर पश्चिम, दक्षिण पश्चिम और दक्षिणपूर्व तटों से आता है। वर्ष 1996-2000 के दौरान गुजरात, और महाराष्ट्र समाविष्ट उत्तरपश्चिम सेक्टर ने कुल अवतरण का 69%

चित्र - 1 भारत में 1991-2001 के दौरान कुल महाचिंगट अवतरण (ट)

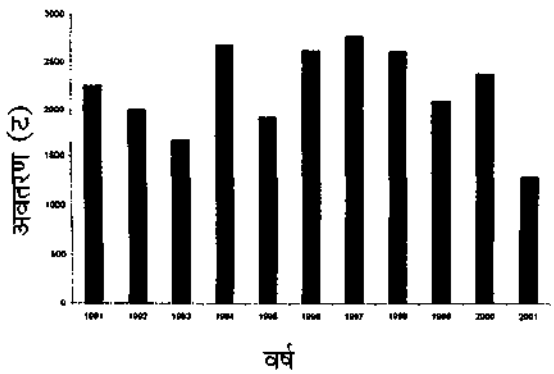

चित्र - 2 गुजरात में 1996-2000 महाचिंगट अवतरण (ट)

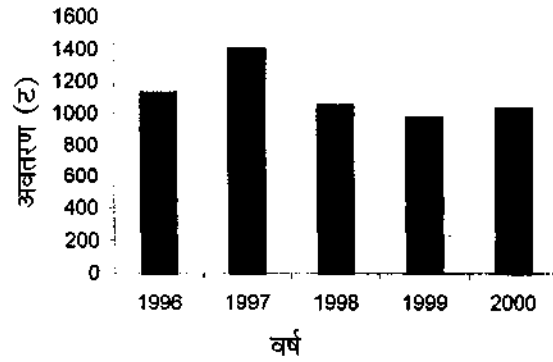

चित्र - 3 महाराष्ट्र में (1996-2000) महाचिंगट अवतरण (ट)

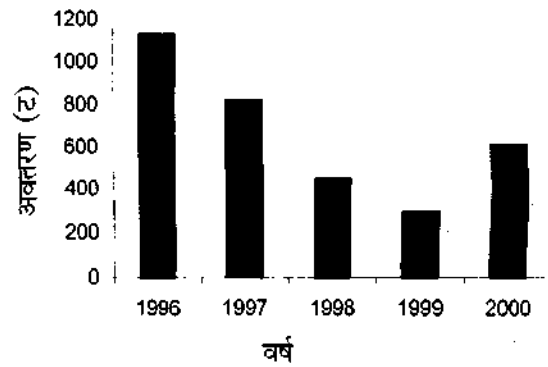

योगदान प्रदान किया। इस अवधि के दौरान गुजरात से औसत वार्षिक पकड 1110 टन (चित्र-2) थी और महाराष्ट्र ने 659 टन (चित्र - 3) का अवतरण किया। वर्ष 1996-98 के दौरान केरल में महाचिंगट अवतरण 147 टन था।

चित्र - 4 केरल में (1996-2000) महाचिंगट अवतरण (ट)

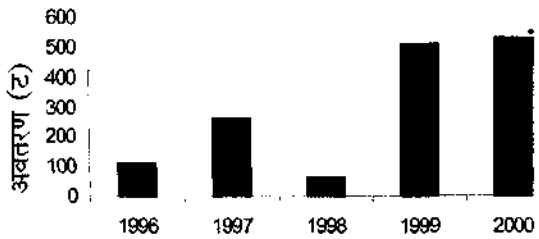

चित्र - 5 तमिलनाडु में (1996-2000) महाचिंगट अवतरण (ट)

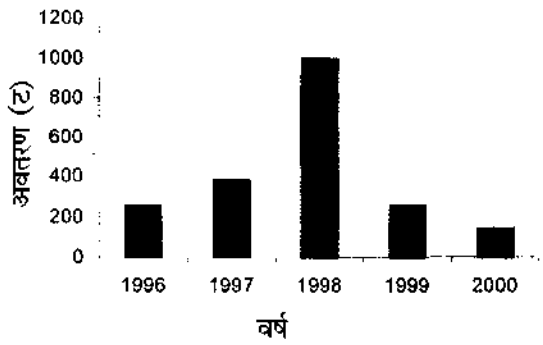

चित्र - 6 2001 दौरान के महाचिंगटों का राज्यवार योगदान
(कुल पकड : 1389 ट)

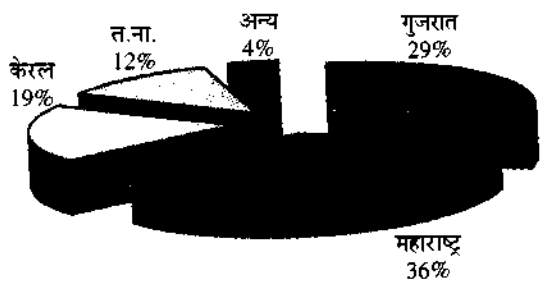

यद्यपि वर्ष 1999-2000 के दौरान गभीर सागर महाचिंगटों के अवतरण के फलस्वरूप पकड 524 टन में बढ़ गयी (चित्र-4)। इस पंच वर्षीय अवधि में तमिलनाडु का औसत वार्षिक अवतरण 404 टन था (चित्र-5). वर्ष 2001 के दौरान के महाचिंगटों का राज्यवार अवतरण चित्र-6 में प्रस्तुत किया गया है। कुल अवतरण का 65% महाराष्ट्र और गुजरात का योगदान है।

जैविकी और मात्स्यिकी

भारतीय तट पर महाचिंगटों की 14 वेलांचली (तटीय) और 6 गभीरसागर जातियाँ होने पर भी वाणिज्यिक मात्स्यिकी में केवल चार तटीय और एक गभीर सागर रूप ही मिलती हैं। उत्तरपश्चिम तट की मात्स्यिकी में शूली महाचिंगट *पान्यूलिरस पोलिफागस* (पंक शूली महाचिंगट) और स्लिप्पर महाचिंगट *थेन्रस ओरियन्टालिस* प्रमुख है जो 20-50 मी की गहराई में बसते हैं। दक्षिण पश्चिम तट पर 1-10 मी के गहराई रेंच में रहनेवाला *पी. होमारस* प्रमुख जाति है जबकि दक्षिणपूर्व तट की मात्स्यिकी में *पी. ओरनाटस* (ओरनेट शूली महाचिंगट), *पी. होमारस* और *टी. ओरियन्टालिस* का योगदान होता है। *पी. वेर्सिकोलर* भी अल्पमात्रा में तिरुवनन्तपुरम और चेन्नै तट पर पायी जाती है। मात्स्यिकी की दृष्टि में गौण अन्य दो जातियाँ हैं *पी. पेनिसिल्लाटस* और *पी. लोंगिसेप्स*। प्रौढ़ावस्था प्राप्त *पी. ओरनाटस* 40-50 मी के गहरे तलों में रहती है जबकि किशोर और उप प्रौढ जातियों को उपतटीय क्षेत्रों में देखी जाती हैं। शूली महाचिंगट *प्यूरुलस सिवेल्ली* दक्षिणपश्चिम और दक्षिणपूर्व तटों में 175-200 मी गहराई के बीच उपरी महाद्वीपीय ढलाल (upper continental slope) में रहती हैं जहाँ से उनको गभीर सागर झींगों के साथ आनायों के जरिए पकडा जाता है। आन्डमान जलक्षेत्रों से रिकार्ड किया गया शूली महाचिंगट की और एक जाति है *लिनुपारस सोम्नियोसस*। निर्यात व्यापार में *पी. ओरनाटस* 'टाइगर' नाम से और अन्य जातियाँ "ग्रीन्स" नाम से जाने जाते हैं। महाचिंगट पकड का 75% चिंगटों केलिए प्रचालित करने वाले आनायों में प्राप्त

होता है। उत्तरपश्चिम तट में महाचिंगटों का 95% आनाय जालों में उप पकड के रूप में प्राप्त होता है। दक्षिण पश्चिम तट पर उथले जलक्षेत्र में पाये जानेवाले महाचिंगटों को पकडने केलिए ट्राप्स ट्रैमल जाल, गिल जाल जैसे देशज संभारों का प्रयोग किया जाता है। दक्षिण पूर्व तट में आनाय जाल एवं देशज संभारों द्वारा महाचिंगट पकडे जाते हैं।

महाचिंगटों के भोजन और अशन स्वभाव पर किये गये अध्ययन से व्यक्त होता है कि ये साधारणतया छोटे छोटे परुषकवचियों, मृदुकवचियों और पोलिकीटों को खाते हैं। इनकी बढ़ती भी अन्य परुषकवचियों के समान समय समय पर छिल्का उतारने से व्यक्त हो जाता है। अंडयुक्त *पी. पोलिफागस* को साधारणतया पंकिल अधस्तरों में और कभी कभी चट्टानी तलों में देखा जाता है जब कि *पी. होमारस* और *पी. ओरनाटस* चट्टानी और प्रवाल क्षेत्रों में रहते हैं। *पी. होमारस* के अंडयुक्त (berried) (निषेचित, अंडों से लदी) मादाओं को उथले जलक्षेत्र में देखा जाता है। मात्स्यिकी में महाचिंगटों का आकार साधारणतया 35-125 मि मी पृष्ठवर्म लंबाई रैंच में देखा जाता है। *पी. होमारस* 320 मि. मी. की कुल लंबाई प्राप्त करती है तो *पी. पोलिफागस* 450 मि. मी. तक और *पी. ओरनाटस* 500 मि. मी. तक बढती है। किशोरों में बढती एकसमान होती है लेकिन प्रौढों में एकसमान नहीं है। *पी. पोलिफागस* मादाएं (50%) 175 मि. मी. की कुल लंबाई पर लैंगिक प्रौढता प्राप्त करती है तो अधिकांश नर 265 मि. मी. की कुल लंबाई पर लैंगिक प्रौढता प्राप्त करते हैं। *पी. पोलिफागस* प्रायः साल भर प्रजनन करते हैं, लेकिन निषेचित अंडों युक्त मादाओं को अगस्त-अक्तूबर की अवधि में देखा जाता है। शूली महाचिंगट उच्च जननक्षमता रखने वाली है जो महाचिंगट की जाति और आकार के आधार पर 50,000 से 10,00,000 अंडे निषेचित करते है। मात्स्यिकी में 100 मि. मी. से कम लंबाई के छोटी *पी. पोलिफागस* महाचिंगटों का प्रवेश दिसंबर - जनवरी के दौरान होता है। 25-40 मी गहराई के क्षेत्र में निषेचित अंडों युक्त मादाओं की उपस्थिति यह व्यक्त करता है कि मादाएं प्रजनन के लिए गहरे क्षेत्र में बडे पैमाने में नहीं जाती हैं। *पी. होमारस* 55 मि. मी. की पृष्ठवर्म लंबाई पर लैंगिक प्रौढता प्राप्त करती है और अधिकांश मादाएं 60 मि. मी. की पृष्ठवर्म लंबाई पर प्रजनन शुरू करती है। प्रजनन साल भर होने पर भी दक्षिण पश्चिम तट पर प्रजनन अधिकतः नवंबर-दिसंबर में और दक्षिणपूर्व तट पर जनवरी-मार्च में होता है। लेकिन *पी. ओरनाटस* में प्रजनन 90 मि. मी. (250 मि. मी. कुल लंबाई) पृष्ठवर्म लंबाई प्राप्त होने के बाद शुरू होता है *पी. होमारस* साधारणतया उथले जलक्षेत्र में प्रजनन करती है। 40-60 मी गहराई में *पी. ओरनाटस* प्रौढों की उपस्थिति से यह सूचना मिलती है कि यह जाति प्रायः गहरे तलों में प्रजनन करती है।

अंडे प्लवपादों (pleopods) के अंतः पादांशों से लगे रहते है और 20-25 दिनों के ऊष्मायन के बाद अंडों से बाहर आये फिलॉसोमा डिम्भक प्रवाह में पडकर अपतट क्षेत्रों में आ जाते है। अंतिम अवस्था में फिलॉसोमा डिम्भक पश्चडिम्भक के रूप में कायांतरण प्राप्त करते है और तटवर्ती क्षेत्रों में जाकर बसते हैं। *पी. पोलिफागस* के किशोर समुद्र के तटवर्ती क्षेत्रों में रहते हैं और प्रौढ, गहरे क्षेत्रों में जाकर मात्स्यिकी में शामिल हो जाती है। *टी. ओरियन्टालिस* 124 मि. मी. की कुल लंबाई पर प्रथम प्रौढता प्राप्त करती है। इसकी पुनरुत्पादकीय जैविकी पर मुंबई में चलाया गया अध्ययन सितंबर से अप्रैल तक का विस्तृत अंडजनन काल व्यक्त करता है। नवंबर से जनवरी तक की अवधि में अंडयुक्त और अंडरिक्त अवस्था की प्राणि की अधिकता भी सूचित करता है। *टी. ओरियन्टालिस* की जननक्षमता निम्न है बल्कि डिम्भक काल छोटा (45-50 दिनों) होता है। अंतिम कायांतरण के बाद पश्चडिम्भक अभितटीय क्षेत्रों में रहने लगते हैं।

उत्तर पश्चिम तट में चिंगटों केलिए प्रचालित आनाय जालों में महाचिंगट आकस्मिकवश पकडे जाते हैं। ऐसे प्राप्त पकड में 45% *पी. पोलिफागस* और बाकी *टी. ओरियन्टालिस* होता हैं। मुंबई में 1978-85 अवधि में

महाचिंगटों की आकलित वार्षिक औसत पकड 9.5 कि. ग्रा. की प्रति प्रयास पकड एकक के साथ 402 टन थी। 54% *पी. पोलिफागस* का और बाकी *टी. ओरियन्टलिस* का योगदान था। वर्ष 1993-94 और 1994-95 में *टी. ओरियन्टालिस* की औसत वार्षिक पकड 1978-85 के 185 टन से 3.6 टन में घट गयी और मात्स्यिकी से यह जाति पूर्णतया लुप्त हो गयी। वर्ष 1996-2000 की अवधि में *पी. पोलिफागस* की वार्षिक औसत पकड 160 टन थी जो वर्ष 1986-90 की अवधि के 370 टन अवतरण की तुलना में 57% की घटती सूचित करती है। *पी. पोलिफागस* साल भर उपलब्ध होने पर भी मौसमिक प्रचुरता और तदनुसार उच्च पकड सितंबर-दिसंबर के दौरान रिकार्ड की थी। मुंबई में किये प्रभव निर्धारण अध्ययन *पी. पोलिफागस* केलिए उच्च वार्षिक विदोहन अनुपात (नर केलिए 0.81 और मादाओं केलिए 0.68) सूचित करता है। वर्ष 1996-2000 के दौरान चलाये गये अध्ययन 78% की उच्च विदोहन दर के साथ उच्च मत्स्यन दबाव व्यक्त किया। धीमी गति में 7-8 सालों में बढनेवाली इस जाति का उच्च विदोहन भयप्रद होता है।

दक्षिण पश्चिम तट पर कोल्लम से कन्याकुमारी तक पडे प्रायः सभी मत्स्यन गाँवों में महाचिंगटों का मत्स्यन किया जाता है। पकड का लगभग 90% *पी. होमारस* होता है। इसकी कुल पकड क्रमिक घटती दिखाकर वर्ष 1966 के 301 टन से 1995-96 में 8 टन हो गयी। इसकी मात्स्यिकी नवंबर से जनवरी तक के श्रृंगकाल के साथ अगस्त से मई तक चलती है। मत्स्यन मौसम उच्च प्रजनन काल (नवंबर-दिसंबर) के दौरान होता है। मत्स्यन प्रयास में हुई बढती, ट्रैमल जाल के ज़रिए किशोरों का विदोहन और अंडवाही मादाओं का भारी विदोहन अवतरण में व्यापक घटती के कारण बन गयी।

रामेश्वरम से पोइन्ट कालिमर को छोडकर कुल दक्षिणपूर्व तट शक्य महाचिंगट मत्स्यन क्षेत्र होता है। यहाँ ट्रैमल जालों से अवतरित महाचिंगटों में *पी. ओरनाटस* प्रमुख है। चेन्नै में ट्राल जाल और देशज संभारों के ज़रिए महाचिंगटों का अवतरण किया जाता है। 1978-85 के दौरान औसत वार्षिक पकड 11 टन थी। वर्ष 1994-95 में छोटे आनायों ने 124 टन महाचिंगटों का अवतरण किया जिसमें 92% *टी. ओरियन्टालिस* थे। ट्रैमल जालों में पकडे गये महाचिंगटों की पृष्ठवर्म लंबाई 21-100 मि. मी. के रैंच में थी जिसमें लगभग 50% 35-45 मि. मी. के आकार के थे। गिलजाल में पकडे गये चिंगटों की पृष्ठवर्म लंबाई 31 से 100 मि. मी. के रैंच में होती है।

वाणिज्यिक मात्राओं में विदोहित एकमात्र जाति है *पी.* सिवेल्ली। इसकी औसत वार्षिक पकड 1998-2000 के दौरान 524 टन थी जिसका अवतरण कोचीन और शक्तिकुलंगरा में हुआ था। अधिकतम वहनीय पकड पश्चिम तट केलिए 8000 टन और पूर्वतट केलिए 1200 टन आकलित की थी। तथापि ये आंकडे मीमांसात्मक लगता है। वर्ष 1999-2000 में *पी. सिवेल्ली* की जैविकी पर अध्ययन चलाये थे। इसका आकार नर जीवियों में 76-80 मि. मी. 176-180 मि. मी. के रैंच में और मादाओं का 81-85 मि. मी. से 176-180 मि. मी. के रैंच में देखा गया। मादाओं में 26% पूर्णतः प्रौढ/निषेचित अंडों युक्त अवस्था में थी। वर्ष 1999-2000 के दौरान माँगलूर में गभीर सागर महाचिंगट *पी. सिवेल्ली* और *नेफ्रोसिस स्टीवार्टी* के अवतरण हुए थे। वर्ष 1993-94 के दौरान टूटिकोरिन से *पी. सिवेल्ली* की पकड प्रति घंटे 15 कि. ग्रा. की पकड दर में 90 टन थी। वर्ष 1997-98 के दौरान पकड 56 टन होकर कम हो गयी।

प्रभव निर्धारण

उथले जल में बसे महाचिंगटों का अधिकतम अवतरण *पी. पोलिफागस* की प्रमुखता के साथ उत्तर पश्चिम तट से

रिपोर्ट की जाती है। *पी. पोलिफागस* पर हाल ही में मुंबई में चलाये गये एक अध्ययन में आयु और बढती का निर्धारण लंबाई-आवृत्ति के आधार पर किया था। मादा एवं नर दोनों में प्रथम तीन सालों में बढती एक समान देखी गयी थी: जैसे प्रथम साल में 85 मि. मी., दूसरे साल में 145 मि. मी. और तीसरे साल में 205 मि. मी.। इसके बाद मादाओं की तुलना में नर तेज़ बढते है और चौथे साल के अंत तक 265 मि. मी., पाँचवें साल में 315 मि. मी. और छठे साल में 355 मि. मी. तक बढते है। लेकिन मादाओं ने 4 से 8 तक के सालों में क्रमश: 255 मि. मी. 290 मि. मी. 320 मि. मी., 345 मि. मी. और 365 मि. मी. की लंबाई प्राप्त की। छिल्का उतारने की प्रक्रिया की बारी अधिक थी आय बढने पर छिल्का उतारने की अवधि लंबी हो जाती है तदनुसार छिल्का उतारने की प्रक्रिया कम हो जाती है। किशोर एवं प्रौढ दोनों अवस्थाओं में छिल्का उतारने की अवधि-लगभग एक समान होती है। नवंबर - दिसंबर की अवधि छोटे आकार के किशोरों का मात्स्यिकी में प्रवेश करने का श्रृंगकाल होता है। कुल आकलित प्रभव 453 टन, खडी प्रभव 271 टन और अधिकतम वहनीय पकड 168 टन आकलित की जाती है।

चर्चा

आज भारत में महाचिंगटों के मत्स्यन में नियन्त्रण लाने केलिए कोई प्रबन्धकीय विनिमयन लागू किया नहीं है। निम्नतम आकार के महाचिंगटों की पकड, संभारों के प्रकार, पोतों की संख्या और मत्स्यन मौसम में पकड आदि केलिए कोई प्रतिबंध या रोक नहीं है। शीतोष्ण और उपोष्ण देशों की एकल-जातीय मात्स्यिकी के विपरीत भारत में महाचिंगट मात्स्यिकी बहुजातीय और परंपरागत एवं यंत्रीकृत सेक्टर समविष्ट विभिन्न प्रकार के संभारों से युक्त होती है। महाचिंगटों के उच्च मूल्य से प्रलोभित होकर मछुए संपदा का विवेकरहित विदोहन करते हैं। इसलिए कृषि और प्रबन्धकीय कार्यान्वयन जैविकीय, सामाजिक और आर्थिक पहलुओं पर अनिवार्यतः विचार करना है।

उपलब्ध वैज्ञानिक सूचना यह व्यक्त करता है कि उत्तर पश्चिम तट पर शूली महाचिंगट *पी. पोलीफागस* और सिकता महाचिंगट *टी. ओरियन्टालिस* को अतिविदोहित किया जाता है। भारत की वर्तमान महाचिंगट पकड कम मूल्य के छोटे नमूने सहित 1985 की पकड का केवल 58% है। मुंबई में 1996-2000 के दौरान औसत अवतरण 1986-90 के उत्पादन की तुलना में 57% तक नीचे आयी। वेरावल और दक्षिण पश्चिम तट के अन्य प्रमुख केंद्रों की भी स्थिति भिन्न नहीं है। टूटिकोरिन में महाचिंगट अवतरण का 43% आनायों द्वारा होता है और यहाँ भी उत्तर पश्चिम की जैसी स्थिति मौजूद है। आनायों में एक उप-पकड के रूप में महाचिंगट प्रकट हो जाते है और कठिनाई यह है कि केवल इस संपदा के मत्स्यन में रोक नहीं लगाया जा सकता। लेकिन गिल जाल, डोल जाल, स्टेक जाल और क्षिप्त जालों (कास्ट जाल) से तटवर्ती जलक्षेत्रों से किशोरों के मत्स्यन नियन्त्रित किया जा सकता है। इस प्रकार प्रजनन के श्रृंगकाल में अंडवाही मादाओं का भारी विदोहन मात्स्यिकी में विपरीत प्रभाव डालता है। दौर्भाग्य की बात यह है कि अधिकतर केन्द्रों में उच्च प्रजनन काल और मत्स्यन का श्रृंगकाल एक ही होता है। उपोष्ण समुद्रों की एकजातीय मात्स्यिकी में प्रजनन काल में मौसमिक पकड रोध का सफल कार्यान्वयन किया गया है। दक्षिणपश्चिम और दक्षिणपूर्व तटों में प्रचालित ट्रैमल जालों में भारी मात्रा में किशोर पकडे जाते है। ट्रैमलजाल महाचिंगटों केलिए नाशकारी संभार है। कम आकार के जीवंत महाचिंगटों के निर्यात प्रारंभ होने के साथ किशोरों और छोटे आकार के महाचिंगटों का अतिविदोदन बढता जाता है। विदेशों में छोटे महाचिंगटों के लिए उच्च माँग होती है। इसलिए भारत छोटे महाचिंगटों का भी निर्यात करता है जबकि अन्य देशों में इन कवचप्राणियों के मत्स्यन एवं निर्यात के मामले में कडा नियन्त्रण लागू किया गया है। भारत की ऐसी स्थिति महाचिंगट संपदा में बुरा प्रभाव डालती है। अतः भारत में महाचिंगटों की निरन्तरता के साथ उपलब्धि के लिए नियामक उपायों

का रूपायन और इसका सार्थक प्रचालन अनिवार्य होता है।

अंडवाही महाचिंगटों के मत्स्यन और निर्यात में रोध, निषेचित अंडों युक्त महाचिंगटों को वापस समुद्र में छोडना, संग्रहण और निर्यात के लिए निम्नतम वैध आकार तय करना (कुल पृष्ठवर्म लंबाई *पी. होमारस* 60 मि. मी., *पी. ओरनाटस* 80 मि. मी., *पी. पोलिफागस* 70 मि. मी. और *टी. ओरियन्टालिस* 60 मि. मी.), ट्रैमल जाल के प्रचालन में रोक, किशोर और अंडवाही महाचिंगटों की पकड से संभावित नकारात्मक प्रभावों से मछुआरों को अवगत कराना, पकड और गभीर सागर मत्स्यन नियन्त्रण, प्रभव बढाने केलिए पहचान किये गये क्षेत्रों में कृत्रिम आवास की स्थापना, प्रजनन एवं बीजोत्पादन को प्राथमिकता देती हुई प्राकृतिक जीवसंख्या बढाने केलिए समुद्र रैंचन आदि प्रबंन्धकीय उपायों का सुझाव दिया जाता है। हाल में संस्थान भारत के दक्षिण पश्चिम तट के मछुआरों को शामिल कराके समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण के निधीयन से महाचिंगटों की सुरक्षा पर एक साझीदार प्रबन्धन कार्यक्रम प्रारंभ किया है। ■

मछली की झिल्ली से कृत्रिम त्वचा विकसित

कोच्ची के वैज्ञानिकों ने मछली की झिल्ली से कृत्रिम त्वचा विकसित करने का दावा करते हुए कहा है कि इसका इस्तेमाल जले हुए रोगियों के घावों को ठीक करने के साथ-साथ दांतों के रोगों के इलाज में भी किया जा सकेगा। केंद्रीय मात्स्यिकी प्रौद्योगिकी संस्थान (सीआइएफटी) की रिपोर्ट के अनुसार मछली के एयर ब्लैडर के कोलाजन और सूअर के शरीर के बाहरी खोल के किटोसन से इस कृत्रिम त्वचा को तैयार किया है। जैविक पट्टियां जले हुए घावों से पानी को अधिक मात्रा में निकलने से रोकने में काफी महत्वपूर्ण साबित होती हैं। जैविक पट्टियां जीवाणुओं के संक्रमण को रोकने, दर्द मिटाने और त्वचा बनने की प्रक्रिया को तेज करने में मददगार हैं।

- नवभारत टाइम्स से साभार

दसवीं पंच वर्षीय योजना के दौरान भारत में समुद्री मात्स्यिकी विकास के लिए कुछ नीति विकल्प

आर. सत्यदास और आर. नारायणकुमार
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

समुद्री मात्स्यिकी भारत की अर्थ व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण भाग है। भारत की अनन्य आर्थिक मेखला 2.02 मिलियन वर्ग किलो मीटर, जो देश के भूमि क्षेत्र का दो-तिहाई भाग होता है, तक विस्तृत है। खाद्य उत्पादन में बढ़ते हुए दबाव के साथ साथ भारत जैसे विकासशील देशों में भविष्य में मात्स्यिकी से खाद्य की पूर्ति होनी चाहिए। पोषण युक्त खाद्य के वितरण के अतिरिक्त यह तटीय मेखला में बसने वाले लगभग तीन मिलियन लोगों और संग्रहणोत्तर सेक्टर में कार्यरत इसी संख्या के लोगों की जीविका की सुरक्षा सुनिश्चित करता है। निर्यात क्षेत्र में समुद्री उत्पादों के निर्यात से प्राप्त विदेशी मुद्रा 6300 करोड़ रुपए (2000-01) आकलित किया गया है। यह सेक्टर पिछले पांच दशकों के दौरान जीवन-निर्वाह के लिए मत्स्यन की अवस्था से उद्योग के स्तर तक बढ़ गया। यह विकास क्राफ्ट-गिअर मिश्रण जिसमें यंत्रीकरण तथा मोटोरीकरण सम्मिलित है, विविधता पूर्ण मत्स्यन तरीके और मात्स्यिकी अवसंरचना के विकास से संभव हुआ। मात्स्यिकी क्षेत्र जी डी पी के 1.3 प्रतिशत योगदान करने पर भी योजना का आबंटन बहुत कम था, जो नवीं पंच वर्षीय योजना तक कुल लागत का 0.3 प्रतिशत था। वास्तव में इस प्रमुख सेक्टर के विकास के लिए निधि का पर्याप्त आबंटन किया जाना चाहिए।

समुद्री मछली उत्पादन वर्ष 1950 के 0.5 मिलियन टन से वर्ष 2000 में 2.70 मिलियन टन तक बढ़ गया है फिर भी सभी प्रकार के मत्स्यन एककों का प्रतिशीर्ष उत्पादन वर्षावर्ष घट गया।

यह तो इस कारण से हुआ है कि हर मछुआरा औसत मत्स्यन लागत के बराबर का आय मिलने तक लगातार मत्स्यन करता रहता है। अतः 50 मी गहराई के अंदर मत्स्यन बेड़ाओं द्वारा किए जानेवाले मत्स्यन पर रोक लगाया जाना है।

इसके अतिरिक्त, मत्स्यन सेक्टर के अंदर प्रति सक्रिय मछुआरे प्रतिवर्ष औसत उत्पादन में अयंत्रीकृत क्राफ्टों के परिचालन से 332 कि. ग्रा. और यंत्रीकृत यानों के परिचालन से 9880 कि. ग्रा. आकलित किया गया। दोनों के बीच का यह अंतर परंपरागत मछुआरों का सीमांतीकरण करने के साथ साथ यंत्रीकृत और अयंत्रीकृत नाव परिचालकों के बीच स्पर्द्धा होने का कारण बन गया। इन यानों की आर्थिक शक्यता और वित्तीय व्यवहार्यता कई अध्ययनों से स्थापित हो चुकी है अतः परम्परागत नावों के स्थान पर मोटोरीकृत यानों का परिचालन दसवीं पंच वर्षीय योजना के दौरान किया जाना उचित होगा।

वर्तमान में, समुद्री मात्स्यिकी क्षेत्र लगभग 10.25 लाख मछुआरों को सक्रिय मत्स्यन में रोज़गार प्रदान करता है जिनमें 80% मछुआरे लोग परम्परागत क्षेत्र में कार्यरत हैं। फिर भी पहले ही अति विदोहन हो गए उपतटीय मात्स्यिकी क्षेत्र में बेकारी की समस्या तीव्र रूप से मौजूद है। मोटोरीकरण के अतिरिक्त, उपतटीय मात्स्यिकी से पर्याप्त मात्रा में श्रमिक दल को वापस बुलाने से मात्स्यिकी के विकास पर प्रभाव न डालते हुए उत्पादन इष्टतम बनाया जा सकता है। अतः एकीकृत तटीय मेखला प्रबंधन के सर्वकार्यों के रूपायन के अंदर भविष्य की योजना में इन लोगों का प्रविस्तारण और

पुनर्वास की कार्रवाई तटीय कृषि आवास तंत्र के अंदर ही की जानी चाहिए।

लघु पैमाने के यंत्रीकृत सेक्टर में उपतट मेखला में अब परिचालन किए जाने वाले बडे आकार के यंत्रीकृत पोतों में कुछ परिवर्तन करके अपतट क्षेत्रों में परिचालन के लिए उपयुक्त करने से उपतट मेखला का मत्स्यन दबाव कम किया जा सकता है। पहले ही यह आकलन किया जाता है कि देश के यंत्रीकृत सेक्टर में 56 प्रतिशत अतिरिक्त क्षमता वाले मत्स्यन बेडाएं उपलब्ध हैं जिनका उपयोग उपर्युक्त उद्देश्य के लिए किया जा सकता है।

मात्स्यिकी संपदाओं के तेज़ विदोहन की वजह से कुछ मछली जातियाँ विलुप्त हो गई हैं। अतः मछलियों के पुनर्भरण के लिए पर्याप्त उपाय ढूँढना और अमल में लाना आवश्यक है। हमारे तटीय समुद्र में उच्च मूल्य वाली मछली जातियों का समुद्र रैंचन करने से अगली योजना के दौरान मछली स्टॉक की वृद्धि और बेहत्तर उत्पादकता हो जाने की प्रत्याशा है।

अंतर्राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान पर परामर्श ग्रूप (CGIAR) की रिपोर्ट के अनुसार यह आकलित किया गाया है कि समुद्र जीव कृषि मानव आहार के लिए आवश्यक सभी मछलियों का 40 प्रतिशत और भौगोलिक मछली पकड़ के मूल्य के आधा भाग से अधिक प्रदान करेगी। अतः दसवीं योजना में पालन के लिए अनुयोज्य मछली जातियों को पहचानकर समुद्र कृषि के लिए इन जातियों के पालन की प्रौद्योगिकियाँ ढूँढने के लिए प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त शांत उपसागर और तटीय समुद्र में शंबु, मोती, खाद्य शुक्तियाँ और अन्य पालनयोग्य मछली जातियों के खुले सागर संवर्धन के लिए भी दसवीं योजना में प्राथमिकता दी जाएं तो भारत में ही समुद्री संवर्धन से उत्पादन बढ़ाया जा सकता है और इसके अतिरिक्त मछली के लिए राष्ट्रीय और भौगोलिक मांग की पूर्ति भी हो जाएगी।

मछली उत्पादन बढ़ाने के लिए खुले सागर में कृत्रिम भित्तियों की स्थापना अत्यंत सफल और अनुयोज्य देखा गया है। पर्याप्त नीतियों के सहारे से इनकी स्थापना को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। हाल ही में तिरुवनंतपुरम और कन्याकुमारी तटों में 31 कृत्रिम भित्तियाँ कार्यरत हैं और इनसे मछली पकड भी अच्छी तरह होती है। उपतटीय प्रग्रहण मात्स्यिकी से उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाए जाने के लिए यह सहायक निकलेगा। दसवीं योजना में इन प्रयासों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

हमारे तटीय समुद्र के प्रमुख स्थानों में कवचप्राणियों और फिनफिशों की प्रमुख जातियों के पंजर पालन के लिए आवश्यक प्रौद्योगिकियाँ भी उपलब्ध है। तटीय पंजर पालन कार्यक्रमों के लिए पर्याप्त विधि सुरक्षा और नीति सहायता अत्यंत आवश्यक है।

भारत की अनन्य आर्थिक मेखला की वार्षिक संग्रहणयोग्य 3.92 मिलियन टन की वर्तमान मात्स्यिकी संपदा शक्यता में से उपतट क्षेत्रों की 2.2 मिलियन टन संपदाओं का पूरी तरह शोषण हो चुका है और सिर्फ अपतट तथा गहरे सागर की मेखला से आगे के विदोहन की प्रत्याशा है। बाकी 1.72 मिलियन टन मछलियों को काम में लाने के लिए गभीर सागर मत्स्यन (DSF) की नीति सहायता अमल में लाना आवश्यक है। अब गभीर सागर मात्स्यिकी नीति का अभाव समुद्री मात्स्यिकी की वृद्धि के लिए हानिकारक है और किसी विलंब के बिना एक स्पष्ट नीति का कार्यान्वयन किया जाना चाहिए।

भारत जीव वैविद्यता से समृद्ध देश है। भारत के मान्नार खाड़ी, पाक उपसागर, कच्च की खाड़ी, आन्डमान और निकोबार द्वीप और लक्षद्वीप समूह में मैंग्रोव तथा प्रवाल भित्तियों की विस्तृत मेखला है। अविवेकपूर्ण शोषण और बिना योजना के विकास कार्यों से इन भंगुर आवास व्यवस्था की क्षति हो जाती है। पर्यावरणीय विशेषताओं से समृद्ध क्षेत्रों का आलेखन करके संरक्षित क्षेत्रों की घोषणा, समुद्री पार्कों की स्थापना, जीवमंडल रक्षित स्थानों और राष्ट्रीय सुरक्षा स्थानों की स्थापना करना आवश्यक है।

समुद्री मात्स्यिकी सेक्टर में वर्ष 2000 के दौरान

मत्स्यन औजारों पर 4200 करोड़ रुपए का निजी निवेश आकलित किया गया है और अवतरण केन्द्रों में 10486 करोड़ रुपए की मछली पकड पहुँच जाती है। इस आकलन से 2.5 का वर्द्धित पूँजी उत्पादन अनुपात (ICOR) स्पष्ट हो जाता है। इस से, आगामी वर्षों में समुद्री मात्स्यिकी और तटीय मेखला में केंद्र और राज्य सरकारों के स्वायत्त निवेश की वर्द्धित साध्यताओं का संकेत मिलता है।

कुल मछली पकड से, वापस छोड दी जानेवाली मछलियों का अनुपात बढ़ता जा रहा है। भौगोलिक स्तर पर यह आकलन किया जाता है कि लगभग 25 प्रतिशत पकड को बेकार के रूप में वापस छोड़ दिया जाता है। यह भविष्य के लिए एक चेतावनी है। भारत में ही हाल के वर्षों में शुरू हुए बहु-दिवसीय मत्स्यन एककों के परिचालन से लेकर छोड देने की प्रवणता बढ़ती जा रही है। समुद्री मात्स्यिकी के लगातार विकास में इसका असर पड जाएगा।

अतः मात्स्यिकी सेक्टर के निरंतर स्थायित्व और इस सेक्टर में परस्पर और आंतरिक संतुलन कायम रखने और सेक्टर की दीर्घकालीन निरंतरता के लिए छोड देनेवाली मछलियों के आर्थिक नष्ट तथा पर्यावरणीय खतरा और मात्स्यिकी संपदा परिरक्षण के बारे में मछुआ समुदायों के बीच विस्तार अभियानों के आयोजनों से उनमें पर्याप्त जागरूकता जगाना आवश्यक है।

समुद्री मछली विपणन में, भारतीय तट के 8129 कि मी में स्थित 2244 से ज़्यादा अवतरण केन्द्र प्राथमिक विपणन केन्द्रों की भूमिका निभाते हैं। क्रमिक रूप से परम्परागत मछली पकड की प्रमुखता कुछ शहरी केन्द्रों तक फैल गई, यह तो मत्स्यन क्षेत्र का यंत्रीकरण और निर्यात मांग की पूर्ति के लिए मछली पकड में हुए परिवर्तन और इस क्षेत्र में उपलब्ध बेहत्तर अवसंरचना की वज़ह से साध्य हो गया। इसके फलस्वरूप ग्रामीण बाज़ारों की प्रमुखता कम हो गई और ग्रामीण उपभोक्ताओं को अधिक मूल्य के कारण अपनी अभिरुचि की मछलियों की उपेक्षा करनी पडी। इसलिए घरेलू ग्रामीण मछली बाज़ारों के विकास और गाँव के अंतर के भागों तक बाज़ार पहुँचाने की ओर प्राथमिकता दी जानी चाहिए। बाज़ार केन्द्रों में शीतीकरण/ बर्फ प्लान्टों और कोल्ड स्टोरेजों की स्थापना से मछली बहुलता के वक्त अधिक पड़ने वाली मछलियों का संभरण करके बाद में बेचने में सहायक बन जाएगा।

समुद्री मात्स्यिकी के संग्रहणोत्तर सेक्टर में, दोनों घरेलू एवं निर्यात बाज़ारों में लगभग 12 लाख लोग कार्यरत हैं। इनमें से लगभग 5 लाख मछुआ महिलाएं हैं, जो मछली सुखाना, झींगों का छिलका उतारना और मछली बिक्री में लगी हुई हैं। अब तो वे वेतन की भिन्नता, नारी होने के नाते अनुचित व्यवहार तथा शोषण जैसी समस्याओं का सामना करती रहती है। उन्हें सुव्यवस्थित काम में लगे हुए लोगों के बराबर मानना चाहिए और उनके कल्याण के लिए आवश्यक कदम उठाया जाना भी आवश्यक है।

निर्यात बाज़ारों पर ज़्यादा निर्भर रहना मात्स्यिकी के लगातार विकास के लिए अनुयोज्य नहीं हो जाएगा। निर्यात बाज़ार में किसी भी समय किसी भी प्रकार की अवनति हो जाएं तो मछली उद्योग में भी प्रतिकूल प्रभाव पड जाएगा। इसलिए निर्यात बाज़ार के समांतर आंतरिक बाज़ारों की विपणन व्यवस्था के विकास को भी पर्याटन प्रधानता दी जानी चाहिए।

हमारे समुद्रीखाद्य निर्यात में मुख्यतः हिमशीतित कच्ची सामग्रियाँ (लगभग 9%) सम्मिलित हैं इसमें परिवर्तन लाने का समय आ गया है। उत्पाद विविधता और भारतीय समुद्री खाद्य निर्यात में गुणता बढाने में और भी सुधार लाना आवश्यक है। अतः हमारे निर्यात आय बढ़ाने के लिए निजी उद्यमियों द्वारा उत्पादों में गुणता वर्द्धन और गुणता का स्तर बेहत्तर कराने के प्रयासों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

विदेशी बाज़ारों में विपणन हेतु निर्यातकों द्वारा गुणता वर्द्धन करने के साथ साथ लघु पैमाने के उद्योगों में भी गुणता वर्द्धन पर ज़ोर दिया जाना है। उदाहरणार्थ मछुआ कुटुम्बों में ही मछली अचार, वेफर, सूखी मछली, मासमीन

और अन्य प्रकार के खाने के लिए तैयार चीज़ें कुटीर उद्योग की तरह बनवाने का प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इस से घरेलू बाज़ारों में मछली एवं मछली उत्पादों की उपयोगिता बढ़ाई जाएगी और तद्वारा मछुआ कुटुम्बों में रोज़गार का अवसर भी मिल जाएगा।

मात्स्यिकी उद्योग कई तरह के उपोत्पादों का निर्माण करता है। झींगा उद्योग के उपोत्पाद के रूप में बनाए वाले *कैटिन* तथा *कैटोसन* से प्रतिवर्ष 50,000 टन रुपए की बिक्री होती है। मात्स्यिकी से उत्पादन किए जाने वाले सभी उपोत्पादों को चिकित्सा, औषधीय तथा सौन्दर्य वर्धन उद्योगों में प्रभावी ढंग से उपयुक्त किया जाना चाहिए। कुछ समुद्री मछली जातियाँ जैसे सुरा, समुद्री घोडा और स्पंज उच्च औषधीय गुणवाली हैं। नई आइ पी आर शासन प्रणाली के अनुसार इन संपदाओं की नाम सूची तैयार करने और इन संपदाओं से उत्पादन किए जानेवाले औषधीय प्रमुख उत्पादों का पेटेन्ट तैयार करने के लिए आवश्यक नीति उपाय ढूँढ लिया जाना चाहिए।

देश में भारतीय मात्स्यिकी की गणना वर्ष 1980 के बाद नहीं की गई है। मात्स्यिकी के विकास की योजनाओं के रूपायन के लिए गणना अत्यंत महत्वपूर्ण सूचना है। इस लिए पांच वर्षों के अंतराल में एक केन्द्रीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा भारतीय मात्स्यिकी सेक्टर की आवधिक गणना की जानी चाहिए। विभिन्न क्षेत्रों के विभिन्न मत्स्यन एककों के आर्थिक निष्पादन का बडे पैमाने में लगातार अनुवीक्षण, बाज़ार सर्वेक्षणों का आयोजन, समुद्री मात्स्यिकी का बाज़ार स्तर का अनुसंधान और मछुआ समुद्रायों की समाज-आर्थिक स्थितियों का आवधिक अध्ययन भी किया जाना आवश्यक है। इस तरह के क्रमिक अध्ययन नीतिकारों को भारतीय मात्स्यिकी की एक विस्तृत नीति के रूपायन में सहायक निकल जाएंगे। ■

काले मोती पर परियोजना

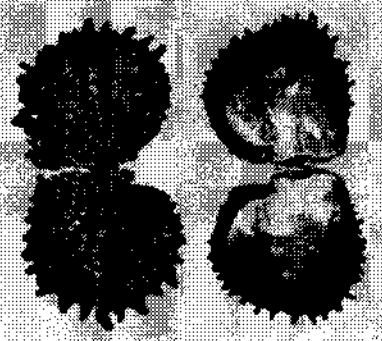

महा सागर विकास विभाग, नई दिल्ली के समुद्री जीव संपदा एवं पर्यावरण कार्यक्रम के अंदर अत्यंत मूल्य वाले काले मोती के उत्पादन केलिए आन्डमान और निकोबर द्वीपों में ब्लैक लिप मुक्ता शुक्ति *पिंक्टाडा मारगरेटिफेरा* का पालन एवं मोती उत्पादन विषय पर 5 वर्ष की परियोजना केलिए महासागर विकास विभाग ने अनुमति दी है।

यह परियोजना सी एम एफ आर आइ और सी ए आर आइ, पोर्ट ब्लेयर और मात्स्यिकी विभाग, आन्डमान व निकोबर द्वीप के सहयोग से मराइन पार्क क्षेत्र से सेसोस्ट्रिस उपसागर, पोर्ट ब्लेयर तक के क्षेत्र में चलाए जाएंगे।

अंतर्राष्ट्रीय मोती मेला में बडे आकार और विविध रंगों के मोती की माँग इस परियोजना का प्रचोदन रहा है। काले रजत, हरे और नील-हरे रंगों के मोती उपलब्ध होने पर भी काला मोती सब से पसंदीदा था। *पिंक्टाडा मारगरेटिफेरा* जाने माने एकमात्र मसल जाति है जिस से काला मोती प्राप्त होता हो।

समुद्री मात्स्यिकी उत्पादन में अग्रणी राज्य गुजरात में मात्स्यिकी के विकास के लिए सुझाव

के.वी. सोमशेखरन नायर और जो के. किषकूडन
सी एम एफ आर आइ का वेरावल क्षेत्रीय केंद्र, वेरावल

भारत के समुद्रवर्ती राज्यों में सब से लंबा समुद्र तट (1600 कि मी), सब से बडा समुद्री शेल्फ (1.6 लाख वर्ग कि.मी.) और सब से विस्तृत अनन्य आर्थिक मेखला (EEZ) गुजरात में है। देश में सब से अधिक मछली यहाँ से पकडी जाती है। साठ के दशकों में यहाँ से करीबन 70,000 टन मछली प्राप्त होती थी। धीरे धीरे यह बढकर नब्बे के दशक की शुरुआत में 7,00,000 टन हो गई। अतः तीन दशकों के दौरान पकड आठ गुनी बढ गई जिसका कारण संग्रहण तकनॉलजी, यंत्रीकृत आनायन, देशी मत्स्यन यानों का मोटोरीकरण आदि मत्स्यन तकनॉलजी में हुआ विकास है। जो भी हो ये सब होते हुए भी नब्बे के दशकों में मछली पकड में उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई है। यह ही नहीं पकड की सांख्यिकी, स्थिरता भी दिखाती है।

सी एम एफ आर आर द्वारा चलाया संपदा निर्धारण अध्ययन से व्यक्त हुआ है कि भारत के उत्तर पश्चिम तटों से मिलती रही कई मछली संपदाओं का अतिविदोहन हो चुका है इसलिए मत्स्यन प्रयास बढाने पर भी पकड की मात्रा बढाना साध्य नहीं है। गुजरात की प्रमुख मछली संपदाएं जैसे बम्बिल, फीता मीन, सीनेइड्स, सूत्र पख ब्रीम्स और पेनिअइड झींगा भी इस में आती है। हाल के संदर्भ में गुजरात राज्य की समुद्री मात्स्यिकी में निम्नलिखित स्थितियाँ देखी जा सकती है:

तीव्र अति मत्स्यन

संपदाओं में घटती

पकड दर में घटती

भर्ती में घटती

अननुयोज्य विदोहन रीति

आवास और संपदाओं का अपचयन

मात्स्यिकी, संपदाओं की शक्य पकड के सम्बन्ध में संस्थान द्वारा अब तक किया गया आकलन पकडी गई मछलियों की मात्रा और प्रकार पर आधारित है। इस रीति में उच्चतम वहनीय पकड (MSY) का आकलन पकडी गई, जाती मानी मछलियों और उसके परंपरागत मत्स्यन धरातलों की गणना करते हुये किया गया है। अस्सी के दशकों में गुजरात की शक्य पकड 3.3 लाख टन आकलित किया गया था, बाद में इसकी पुनरीक्षा करते हुए नब्बे के दशक की शक्य पकड 7.7 लाख टन बनाया गया था। स्टॉक निर्धारण केलिए प्राप्ति, विदोहन दर और मात्स्यिकी के स्टाटस पर की गई आकलन रीति या मोडलिंग में उष्णकटिबंधीय संपदाओं के अभिलक्षण जैसे निरंतर स्फुटन, जाति-जाति में होनेवाली जननक्षमता' चारा-परभक्षी संबंध आदि को नकारा गया था। इसके अनुसार दक्षिण-पाश्चिम तटीय आवास तंत्र पर बनाए गए मोडलिंग से अब यह व्यक्त हुआ है कि प्रत्येक आवास तंत्र से कितनी मात्रा की जैव संपदा का संग्रहण कर सकते है। संपदाओं के परिरक्षण और विदोहन पर प्रबंधन रीतियाँ खींचने को यह मोड़लिंग उचित लगता है। इसलिए संपदा निर्धारण केलिए अधिक अनुयोज्य आकलन रीतियों (मोडलिंग) का रूपायन किया जाना गुजरात की समुद्री मात्स्यिकी के निरंतर विकास केलिए आवश्यक है। नितलस्थ पर्यावरण तंत्र में आनायन और बढती मत्स्यन यानों के अनियंत्रित प्रचालन से होनेवाले प्रभावों का विस्तृत निर्धारण अनिवार्य लगता है। अब वर्गनाश/ खतरे से पीडित मानी जानेवाली जातियाँ जैसे तिमि सुरा,

समुद्री घोड़ा, समुद्री कच्छप, डॉल्फिन, पोरपोइस, ड्यूगोंग संपदाओं का आवधिक निरीक्षण, आकलन और सूचनाओं का उन्नयन किया जाना चाहिए। सारी प्रबंधन नीतियाँ मछुआ समुदायों की समाज-आर्थिक स्थितियों से सीधा संबन्ध जोडते हुए रूपाइत किया जाना है।

समुद्री संवर्धन

गुजरात का समुद्रीय रेखा देश के पश्चिम भाग में स्थित सब से विस्तृत समुद्री क्षेत्र है। काम्बे और कच्च की दो खाड़ियों को जोडके इसका क्षेत्र विस्तार 59% तक आता है। इस में खारा पानी प्रदेशों का विस्तार करीबन 3,76,000 हेक्टयर है जहाँ खारापानी जीवियों का पालन और संवर्धन साध्य है। इस लक्ष्य को आगे रखते हुए गुजरात सरकार ने किसानों के 3 खारापानी विकास अभिकरणों की स्थापना की है। कृषि के लिए अनुयोज्य क्षेत्रों का ढूँढ और प्रशिक्षण-प्रोत्साहन के ज़रिए मछुआरों को इस में लग जाने का अवबोध जगाना इन अभिकरणों का उद्देश्य है। मत्स्यन कार्यों में लगे गए 499 सहकारी संघ, राज्य में कार्यरत है।

सी एम आर आर द्वारा विकसित किए कई समुद्री संवर्धन/पालन पाकेजों का प्रयोग केरल, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और कर्नाटक सरकार द्वारा किया जा रहा है। इन पाकेजों का परीक्षणार्थ प्रयोग गुजरात में भी किया जाना है ताकि इसका वाणिज्यिक प्रगति की साध्यताएं देखी जा सकें।

परुष कवचियों (क्रस्टेशिया) का समुद्री संवर्धन

सी एम एफ आर आइ ने अर्ध-तीव्र और तीव्र-झींगा पालन प्रौद्योगिकियों का विकास किया है। इंडिकस, सेमिसल-काटस और मोनोडॉन झींगो का मानकीकृत स्फुटनशाला (हैचरी) तकनॉलजी भी संस्थान के पास है। झींगा स्फुटनशालाओं और झींगा खेतों की स्थापना केलिए संस्थान द्वारा परामर्श सेवाएं भी प्रदान की जाती है। अभी समय आया है संस्थान द्वारा यह अध्ययन चलायें कि किस स्थान पर किस प्रकार या जाति के झींगों का पालन करें।

कवचप्राणियों (मोलस्क) का समुद्री संवर्धन

समुद्री शुक्तियों से सुन्दर सा सुन्दर मोतियों का संवर्धन, खाद्ययोग्य शुक्तियों (ओयस्टर) का पालन शंबुओं (मसल) और सीपियों (पाफिया *मलबारिका* और *अनडोरा* ग्रानोसा जाति के क्लाम) संबंधी तकनॉलजी का विकास और मानकीकरण संस्थान द्वारा किया गया है। इन प्रौद्योगिकियों का प्रयोगार्थ परीक्षणों के जरिए परिष्कार भी किया है। शंबु, खाद्यशुक्ति, मुक्ता शुक्ति और सीपी के बीजों के विशाल या पुंज उत्पादन केलिए तकनॉलजियाँ विकसित हुई है। संस्थान द्वारा देश के समुद्रवर्ती राज्यों की माँग पर स्फुटनशाला में उत्पादित मुक्ता शुक्ति और खाद्यशुक्ति बीजों का वितरण और पालन के लिए जानकारियाँ प्रदान की जाती है। गुजरात का तट अपने विस्तृत खाडियों और खारापानी जलक्षेत्रों के कारण द्विकपाटी के पालन केलिए अनुयोज्य लगता है। कच खाडी में *खदास* नाम से अभिहित अन्तराज्वारीय प्रवालीय क्षेत्रों में मुक्ता शुक्ति *पिंक्टाडा फ्यूकेटा* भारी मात्रा में उपलब्ध है। कच खाडी के विशाल तटों में हरित शंबु *पी. विरिडिस* दिखाया पडता है। समुद्र क्षेत्र को आगे फैलानेवाले कई ज्वारनदमुखीय (estuarine) और नमकीन संकरी खाडियाँ (creeks) जो यहाँ स्थित है, में खाद्य शुक्तियों और सीपियों का अनेकानेक संपदा है। संस्थान द्वारा राज्य सरकार को कवचप्राणी समुद्र संवर्धन और पालन प्रौद्योगिकियों के प्रयोग के लिए अनुसंधान-विकासपरक सहायता दिया जा रहा है।

समुद्री शैवाल संवर्धन

समुद्री शैवाल उत्पादन में गुजरात का देश में दूसरा स्थान है। यहाँ के समुद्रतटों से करीबन 200 जातियों के समुद्री शैवाल ढूँढ निकाले गए हैं। एगर प्राप्त होनेवाला, *ग्रसिलेरिया* और *जेलिडियेल्ला* जातियाँ, अलगिन मिलनेवाला *सरगासम टेनेरिमम*, खाद्य योग्य पोरफिरा जाति आदि विविध प्रकार के समुद्री शैवाल यहाँ भारी मात्रा में उपलब्ध है। समुद्री शैवालों की उपलब्धता के अनुसार गुजरात के तटीय प्रदेशों को निम्नलिखित 6 क्षेत्रों में बांटा जा सकते हैं:

भवनगर - डियू
कोटाडा - देवका

वडोदरा - पोरबंदर
कच - भोगट
द्वारका - ओखा
ओखा - सिक्का

भारत में एगर-एगर और आलगिन के उत्पादन करनेवाले कई फाक्टरियाँ है। आज कल ये फाक्टरियाँ कच्चे माल की कमी से पीडित होने पर भी उपलब्ध क्षेत्रों से शैवालों का संभरण करने का प्रयास अब तक किया नहीं गया है। जो भी हो, इससे जुडे हुए तकनालजियाँ तमिलनाडु तटों में सीमित रहते हुए आज चल रही है। **गुजरात तट में इस प्रौद्योगिकी की तकनो-आर्थिक साध्यताओं पर अध्ययन चलाना अत्यंत आवश्यक है।**

सजावटी या अलंकारी मछली पालन

सी एम एफ आर आइ द्वारा गुजरात में चलाये अध्ययनों ने व्यक्त किया है कि यह तट समुद्री सजावटी मछलियों के वैविद्यपूर्ण संपदाओं से अनुग्रहीत है। संस्थान ने सजावटी मछलियाँ जैसे डामसेल फिश और क्लाऊन फिश की स्फुटनशाला प्रौद्योगिकियाँ विकसित की हैं। गुजरात के तटों में इन प्रौद्योगिकियों का प्रयोग और परिष्कार करने के सम्बन्ध में अध्ययन चलाना बहुत ज़रूरी है जिस से यहाँ के उपभोक्ता लाभ उठाया जा सकें

समुद्री प्रदूषण

समूचे समुद्रतट विविध प्रकार के प्रदूषकों से होनेवाले जलमलिनीकरण से पीडित है। गुजरात में केमिकल इन्डस्ट्रीस बहुत हैं जिन में उर्वरक, टेक्स्टैल, डाई, पेन्ट, कीटनाशी, भेषज, सोडा, सिमेन्ट, तेल आदि से जुडे रासायनिक कार्य हो रहे हैं। ये रासायनिक पानी में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मिल जाते हैं। पानी प्रदूषण के नियंत्रण के लिए निगरानी और विनियम अत्यंत आवश्यक है क्योंकि इस से पर्यावरण और जीवों को नाश और ध्वंस सुनिश्चित है। ■

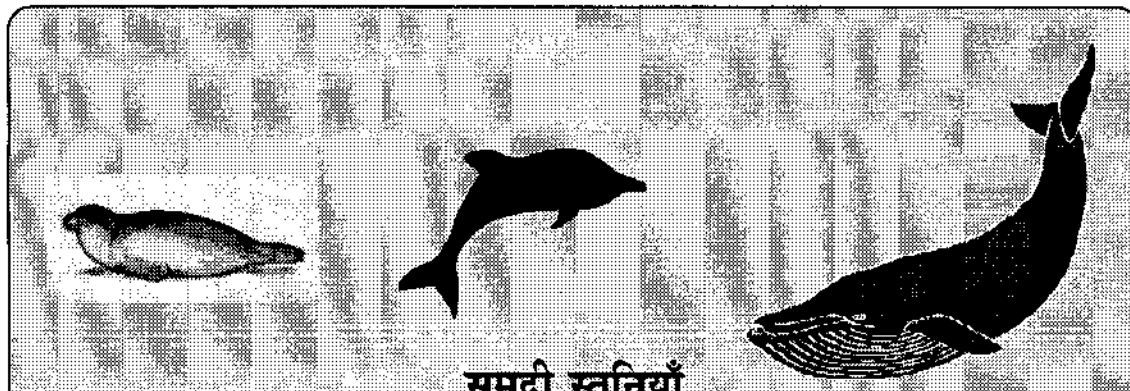

समुद्री स्तनियाँ

समुद्री स्तनियाँ खतरे में पडी समुद्री संपदा मानी जा रही है। इनकी परिरक्षा के बारे में हुए अवबोध सी एम एफ आर आइ द्वारा इस पर एक अध्ययन चलाने का प्रेरणा श्रोत बन गया। महासागर विकास विभाग द्वारा प्रायोजित इस परियोजना में संस्थान ने भारतीय समुद्रों और इस के आस पास के समुद्रों में पाए जानेवाले स्तनियाँ जैसे तिमि, डॉल्फिन, ड्यूगोंग आदि की प्रचुरता और वितरण, जीव विज्ञान और अतिजीवन स्थितियों पर अध्ययन शुरू किया है। इन जीवियों पर एक मानचित्रावली तैयार करना भी योजना का उद्देश्य है।

मछली तालाबों में पाई जाने वाली कुछ सामान्य बीमारियाँ तथा उपचार

आर.के. गुप्ता, एन.के. यादव, के.एल. जैन एवं ए.एस. बरमन
जीव विज्ञान एवं जल कृषि विभाग चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में मई-जून के महीने बहुत ही गर्म होते हैं और इन्हीं महीनों में पाली जाने वाली मछलियों की सबसे अधिक मौत होती है। इसके दो कारण हैं, पहला जो यह कि इन दिनों तालाबों में पानी की मात्रा काफी कम हो जाती है, जिसकी वजह से तालाबों का तापमान काफी बढ़ जाता है और पानी में पाई जाने वाली ऑक्सीजन की काफी मात्रा घट जाती है जिसकी वजह से मछलियों को श्वास लेने में काफी कठिनाई होती है तथा कभी-कभी पानी में ऑक्सीजन की मात्रा की काफी कमी से मछलियां मर भी जाती हैं। दूसरा कारण है यदि तालाबों के रख-रखाव में अनियमितता बरती जाए जो मछलियों में होने वाले रोगों की संक्रामकता और भी बढ़ जाती है। यह भी पाया गया है कि क्षारीय जल की अपेक्षा मीठे जल की मछलियों को विकृत रोग अधिक लगते हैं। इन तालाबों में भी मछली रोग अधिक पाए गए हैं जिनमें मछलियां तालाब के अनुपात से कहीं अधिक मात्रा या संख्या में छोड़ी गई हों। मछलियों के तालाब में, बीमारियों के अध्ययन से पहले, तालाबों का वातावरण जान लेना आवश्यक होता है। मछली तालाबों में, सामान्य रूप से कभी-कभी कुछ संक्रामक रोग मछलियों में लग जाते हैं। रोगों के नाम, पहचान, लक्षण तथा उपचार, नीचे दिये गए हैं।

1. ड्रोपसी (शरीर में पानी भरना)

कारण

यह रोग एरोमोनास पंक्टेट नामक जीवाणु के कारण होता है।

लक्षण

1. देह गुहा में पानी जैसा तरल द्रव भर जाता है।
2. जब शतक गुहा में भी पानी भर जाता है तब मछली काफी फूली हुई लगती है।
3. आखों पर सोजिश आ जाती है तथा बाहर की तरफ निकल आती है।
4. स्केल चमड़ी के ऊपर उठ जाती है तथा उसकी

उपचार

1. पोटेशियम परमैगनेट का घोल (1 पी.पी.एम.) तालाब में डाल देना चाहिए।
2. रोगाणु मछली को 10 पी. पी.एम. पोटेशियम परमैगनेट के घोल में 1 मिनट के लिए स्नान कराये।
3. अधिक रोगाणु मछली को तालाब से निकाल कर जमीन में दबा दें।
4. 300 पी.पी.एम. चूना का घोल तालाब के पानी में

	जड़ों में भी पानी भर जाता है।	डाल दें।
	5. मछली का जिगर ठीक प्रकार से कार्य नहीं करता है तथा पाचन शक्ति कमजोर हो जाती है।	5. यदि बीमारी बहुत ज्यादा बढ़ गई है तो सिरिंज से पहले द्रव निकाल दें। फिर इलाज शुरू करें। 6. दो प्रतिशत नमक के घोल से धोयें। 7. उपचार के समय बाहरी खुराक बन्द कर दें।

2. पख (फिन) तथा पूंछ रोग से पालगानिया का सड़ना

कारण	लक्षण	उपचार
जीवाणु (बैक्टीरिया) से फैलता है	1. शुरू में सफेद धारियां पर तथा पूंछ के आधार पर दिखती है।	1. एक बड़े बर्तन में (एक्वेरियम) सबसे पहले मछली को 3 प्रतिशत नमक के घोल में स्नान कराएं। जो 3-4 मिनट तक चले।
	2. धीरे-धीरे पर तथा पूंछ पर सफेद धब्बे दिखाई देते है जो बाद मे पूरी पूंछ तथा पख पर फैल जाते है	2. रोगाणु मछलियों को नीला थोथा (1:2000) के घोल बनाकर अथवा पोटेशियम परमैगनेट का घोल (1:1008) बनाकर 5-10 मिनट तक स्नान करायें। यह क्रम 5-6 दिन तक दोहराया जाना चाहिए।
	3. कुछ समय बाद पर बिल्कुल समाप्त हो जाते है।	3. फिनाइल में पूंछ के प्रभावित भाग को काट कर डुबाने से भी मछलियों को लाभ होता है।
	4. कभी-कभी इनमे मवाद पड़ जाता है। मवाद के कारण इनमें जीवाणुओं की संक्रामकता बढ़ जाती है।	4. मछली को पाइरिडाइल मरक्यूरिक एसिड पी.पी. एम. 1:500,000 के घोल में 1 घण्टे तक रखने से बैक्टीरिया मर जाते है।

3. आँख का रोग (मछली का अंधापन)

कारण	लक्षण	उपचार
यह रोग ऐरोमोनास लोक्वोफसिएंस नामक जीवाणु से होता है।	1. आमतौर पर मछली के छोटे बच्चों में अधिक पाया जाता है कभी कभी बड़ी मछलियां भी इसका शिकार बनती है। 2. आँख की पुतली अपारदर्शी हो जाती है। 3. नेत्रतंत्रिका (आप्टिक नर्व) धीरे-धीरे सड़ने लगती है। 4. मस्तिष्क पर इसका प्रभाव पड़ता है तथा वह भी नष्ट हो जाता है। 5. रोग के ज्यादा बढ़ने पर मछली की मृत्यु हो जाती है।	1. रोग की शुरूआत में ही तालाब में 1 पी.पी.एम. पौटेशियम-परमैगनेट का घोल डालें। 2. रोगाणु मछली को क्लोरो माईसिन (8-10 मिलीग्राम प्रति लीटर) के घोल में कम से कम एक घण्टे के लिए रोज स्नान कराये, जब तक मछली रोग से मुक्त न हो जाए।

4. गलफड़ों की बीमारी - गिलरोट (गलफड़ों का गलना)

कारण	लक्षण	उपचार
यह बीमारी एक फफूंद (ब्रेकियोमाइसिस) के आक्रमण के कारण होती है।	1. गलफड़ों के पंख जैसे पतले भाग (फिलामैन्ट) विशेष रूप से ऊपरी भाग कालापन लिए लाल रंग का और निचना भाग सफेद हो जाता है। 2. यह बीमारी प्रारम्भ में भयानक रूप से फैलती है और बहुत सी मछलियां मरने लगती है। लगभग आठ दिन में आक्रमण का असर कम हो जाता है।	1. तालाब में यदि किसी भी प्रकार की गन्दगी दिखाई दे तो तुरन्त निकाल दें। 2. मछलियों को भोजन देना बन्द कर दें। 3. पानी अधिक से अधिक बदलना या पुराना बदल कर नया पानी डालना सबसे अच्छा रहता है। 4. तालाब में 51-102 किलो प्रति हैक्टेयर चूना छिड़के तथा 2 पी.पी.एम. पोटेशियम परमैगनेट डालें। 5. एक प्रतिशत फिनोक्सीथोल का घोल बनाकर 10-20

सी.सी. घोल बनाकर 1 लीटर पानी में मिला लें इस घोल में रोगी मछलियों को 10 मिनट तक रखें।

अन्य बीमारियां

1. दस्त की बीमारी

कारण	लक्षण	उपचार
यह सामान्य बीमारी है जो किसी परजीवी के कारण नहीं होती। यदि कृत्रिम भोजन में वसा (फैट) और अपचशील पदार्थ बहुत होते है तो यह बीमारी हो जाती है।	1. गुदा पर लाल रंगत और म्युकस जैसा पदार्थ बहता है।	1. कृत्रिम आहार देना बन्द कर देना चाहिए। 2. तालाब से पानी निकाल कर साफ पानी भर देने से मछलियां ठीक हो जाती है।

2. अल्सर या नासूर फोड़े

कारण	लक्षण	उपचार
विभिन्न बैक्टीरिया	1. मछली के शरीर पर फोड़े दिखाई देते है। 2. कुछ समय बाद यह मछली के घाव के रूप में हो जाते है जो मांसपेशियों को भेदते हुए गहराई में चले जाते है।	1. मछली के घावों पर तूतिया ($CuSO_4$) का लेप लगाएं और तूतिया के 1:2000 घोल में तीन चार दिन, रोज दो मिनट तक रखें।

3. इक्थ्योपथिरियसिस

	1. मछली की त्वचा, गलफड़ों अथवा पंखों पर छोटे-छोटे सफेद धब्बे दिखाई देते है।	1. मछली को 1:5000 के फारमेलिन के घोल में सात से दस दिन के लिए एक-एक घण्टे के लिए रखें। 2. 2 प्रतिशत नमक का घोल बनाकर उसमें मछली को सात दिन तक धोएं। 3. 1:20,000 का कुनैन का घोल बनाकर मछली को पांच मिनट तक धोएं।

कारण	लक्षण	उपचार
4. कास्टिएसिस :		
	1. इसमें मछली की पूरी त्वचा पर हल्के नीले रंग का तरल पदार्थ बहने लगता है। इससे मछली को बैचेनी होती है मछली ठीक प्रकार से सांस नहीं ले पाती।	1. रोगी मछली को 3 प्रतिशत नमक के घोल में 10 मिनट तक धोएं। 2. 1:2500 फारमेलिन का घोल बनाएं और उसमें रोगी मछली को 5-8 मिनट तक धोएं। 3. 1:5000 ग्लेशियल एसिटिक एसिड के घोल में दो तीन मिनट के लिए मछली को रखें। 4. यदि रोग आंतरिक हो तो सल्फाइडाइजिन, सल्फामीरेजिन मछली को दें।
5. सेप्रोलेग्निया फफूंद का आक्रमण		
कारण	**लक्षण**	**उपचार**
1. जिन मछलियों का शरीर किसी कारण चोट खा जाता है तो घाव पर यह फफूंद आक्रमण कर देती है। 2. अधिक संख्या में संचय व तालाबों में काई का होना इसके फैलने में सहायक होते है।	1. फफूंदी छोटे बच्चों पर आक्रमण करती है जिससे मछलियों के बच्चे इकट्ठे मरने लगते है।	1. मछली को 5-10 मिनट तक 3 प्रतिशत नमक के घोल अथवा 1:2000 भाग नीला थोथा का घोल अथवा 1:1000 भाग पौटेशियम परमैगनेट के घोल में स्नान करवाना चाहिए।

समुद्री शैवाल - खाद्य सुरक्षा के लिए एक मूल्यवान संपदा

रीता जयशंकर

केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

एशिया-पसफिक क्षेत्र के तटीय भागों में रहने वाले लोगों के लिए मात्स्यिकी एक बहुमूल्य खाद्य सुरक्षा है। वर्ष 1994-96 के दौरान दक्षिण पूर्व एशिया में प्रति शीर्ष खपत, जो 20.8 कि.ग्रा./वर्ष के अनुपात पर है, विश्व की तुलना में (15.2 कि.ग्रा./वर्ष के अनुपात पर) काफ़ी ज़्यादा है। पूरे विश्व का 85% निर्यात मूल्य एशिया - पसफिक मछली तथा मछली उत्पादों से किया गया है और यह मूल्य वर्ष 1996 के दौरान 1800 करोड अमरीकी डॉलर से भी ज़्यादा है। समुद्री शैवाल मात्स्यिकी की एक प्रमुख प्राकृतिक संपदा माना जाता है जो एशिया पसफिक क्षेत्रों के अधिकांश भागों में सस्ती एवं पोषणयुक्त खाद्य सुरक्षा प्रदान करता है।

विकसित देशों में बढ़ती हुई मांग तथा विकसित होने वाली आबादी की वज़ह से वर्ष 1960 से लेकर प्रग्रहण मात्स्यिकी का द्रुत विकास हुआ है और पिछले दो दशकों में जलजीव कृषि का भी शीघ्र विकास हुआ है।

वर्ष 1997 में जलजीव कृषि के उत्पादन में तिगुनी वृद्धि (वर्ष 1986 में 10.5 मेट्रिक टन से 1997 में 32.8 मेट्रिक टन) हुई, जो पूरे विश्व के जलजीव कृषि का 91% आकलित किया गया है। चीन जलजीव कृषि का प्रमुख उत्पादक देश है, जहाँ से विश्व भर के उत्पादन का 67% योगदान होता है। इस देश की जलजीव कृषि में सबसे प्रमुख और उपयोगी है समुद्री शैवाल। दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व एशिया के सबसे प्रमुख जलजीव कृषि उत्पादक देश भारत, इन्डोनेशिया, फिलिपीन्स और थायलान्ड है, जहाँ से 5.5 टन उत्पादन होता है। समुद्री शैवालों के अतिरिक्त विश्व में तेज़ से बढ़नेवाला एक खाद्य उत्पादन क्षेत्र है सूक्ष्म शैवाल (microalgae)। चिंगटों का कुल औसत उत्पादन 50% से ज़्यादा होता है। जलजीव कृषि उत्पादन से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ साथ तटीय मेखला में बसनेवालों की गरीबी मिटाने का उपाय भी खोल जाता है। जलजीव कृषि उत्पादन से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ साथ तटीय मेखला में बसनेवालों की गरीबी मिटाने का उपाय भी खोल जाता है। जलजीव कृषि अब विश्व में तेज़ बढ़नेवाला खाद्य उत्पादन क्षेत्र बन गया है। यह आकलन किया जाता है कि वर्ष 2032 तक मानव आबादी 9-10 बिलियन तक बढ़ जाएगी। वर्ष 1997 तक मानव खाद्य के 97% का उत्पादन भू-भागों, जो धरती का एक तिहाई होना है, में किया जाता था। लेकिन आगामी वर्षों में पूरी जनता के खपत के लिए भूमि के साथ साथ पानी से भी प्रोटीन संपदाएं निकालना आवश्यक बन गया है।

समुद्री शैवाल को अनिष्कासित (untapped) समुद्री संपत्ति माना जाता है और इसकी विशेष पौष्टिकता की वजह से भारत सहित कई देशों में भविष्य के लिए एक अच्छे खाद्य के रूप में उपयुक्त किया जा सकता है। समुद्री शैवाल खाद्य, उर्वरक, औषध के उपयोग और प्रोटीन, विटामिन, खनिज, अयोडिन, ब्रोमिन, फैटी आसिड और प्राकृतिक वर्णक (pigment) के व्यवहार के लिए जलजीव कृषि उद्योग का एक भाग माना जाता है। इसके विपणन के लिए अंतर्राष्ट्रीय तौर पर बढ़ती हुई मांग के कारण चीन, जापान, कोरिया, फिलिपीन्स जैसे देशों तथा कुछ हद तक भारत में भी समुद्री शैवालों का वाणिज्यिक रूप से पैदावार की गई है। चीन में वर्ष 1997 के दौरान कुल समुद्री शैवाल उत्पादन का 87% उत्पादन किया, जो 6.8 मिलियन मेट्रिक टन आकलित किया गया। चीन से कोरिया रिपब्लिक और जापान को खाद्य के रूप में समुद्री शैवाल का निर्यात किया जाता है। कोरिया रिपब्लिक से कम मात्रा में पोरफिरा और

अन्डेरिया जैसे समुद्री शैवाल (वर्ष 1996 में 21,000 मेट्रिक टन) जापान को निर्यात किया जाता है, फिलिप्पीन्स, थानसानिया और इन्डोनेशिया से उल्लेखनीय मांत्रा में युकेमा का निर्यात यू एस ए, डेन्मार्क और जापान को किया जाता है।

समुद्री शैवालों की कोशिका भित्ति (cellwall) पोलीसाकराइड्स जैसे एगार-एगार, एलिगन और कैरागीनन भी प्रमुख है। लाल शैवाल से एगार का सार निकाल लेता है। औषधीय उद्देश्यों के अतिरिक्त खाद्य उद्योग में भी इसका उपयोग किया जाता है। कैक आदि बेकरी चीज़ों की सजावट (आइसिंग), डिब्बाबन्द खाद्य वस्तुओं और बेकरी उत्पादों में और दूध को गाढ़ा करने के लिए करीबियन देशों में इसको उपयुक्त किया जाता है। टीरोक्लाडिया और जेलीडियम जैसे शैवालों से बेहत्तर एगार का उत्पादन किया जाता है। विश्व भर में लगभग 16,000 टन एगार का वार्षिक उत्पादन किया जाता है। कुल एगार का 50% से ज़्यादा भाग खाद्य योग्य एगार ग्रेसिलेरिया से उत्पादित होता

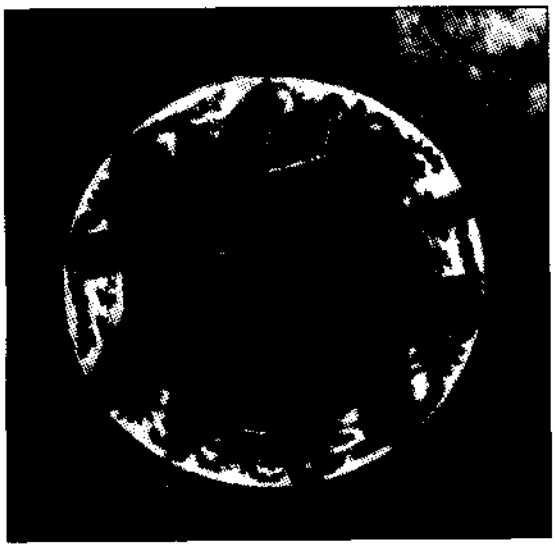

समुद्री खाद्य जेली

है। हवाय में इसे अत्यधिक मूल्यवान सब्जी के रूप में माना जाता है। फिजी तथा अन्य पसफिक द्वीपों में इसे समुद्री खाद्य जेली के रूप में उपयुक्त किया जाता है। पश्चिमी देशों में एगार को बियर के किण्वन में और वाइन (मदिरा) तथा कोफी के उत्पादन में (शुद्धीकरण के कारक के रूप में) उपयुक्त किया जाता है।

एल्गिन समुद्री शैवाल का और एक कोशिका भित्ति पोलीसाकराइड है जिसे भुरे शैवाल (brown algae) से निकाल लिया जाता है। कपड़ा निर्माण, चमडा उद्योग, सौन्दर्य वर्धक, गोंद और रेज़िन उद्योग में इसका अधिकतर उपयोग होता है। खाद्य उद्योग में, आइस-क्रीम और मिल्क शैक में स्थायिकारक (stabilizer) के रूप में भी इसका उपयोग होता है। लेड और स्ट्रोनशियम जैसे भारी धातुओं को शरीर से स्वतः निकाल देने के लिए इसे उपयुक्त किया जाता है। एल्गिन निकालने के लिए कच्चे माल के रूप में उपयुक्त किए जाने वाले साधारण समुद्री शैवालों में एसोफिल्लम नोडसम, लामिनेरिया जाति, माक्रोसिस्टिस पाइरिफेरा (जयन्ट केल्प), सरगासम जाति, टर्बिनेरिया और सिस्टोसीरा जाति (भारत) प्रमुख है। चीन बडे पैमाने में लामिनेरिया की पैदावार करनेवाला देश है।

कुछ लाल शैवालों से कैरागीनन का उत्पादन किया जाता है और डी-गालक्टोपाइरनोस की वजह से यह ऐगार से विभिन्न रह जाता है। इसे आइरिष मोस (कोन्ड्रस क्रिस्पस), युकेमा, जिगार्टिना और हिपनिया जैसे शैवालों से निकाल लिया जाता है। कैरागीनन को मुख्यतः खाद्य उद्योग में उपयुक्त किया जाता है।

समुद्री शैवालों में 60 से अधिक सूक्ष्म मात्रिक तत्व (trace elements) मौजूद हैं जिनकी सान्द्रता ज़मीन के पौधों में मौज़ूद तत्वों से ज़्यादा है। भुरा शैवाल लामिनेरिया रेलिग्रोसा में 11.550 पी पी एम की भारी मात्रा में अयोडिन पाया जाता है। फिलिपीन्स तथा भारत में पाए जाने वाले सरगासम, लॉरेन्शिया और ऐस्पेर्जियोप्सिस हैक्सिफोलिया प्रजातियों के शैवालों में भी भारी मात्रा में अयोडिन पाया जाता है। एशिया के कुछ देशों में गोइटर रोग नहीं दिखाया पडता है क्योंकि यहाँ के लोग आहार में समुद्री शैवालों का ज़्यादतर उपयोग करते हैं और इस वजह से स्वास्थ्य के लिए आवश्यक अयोडिन प्राप्त होता है। भारत और अन्य

कई देशों में अयोडिन की कमी के कारण गोइटर जैसे बीमारी स्वास्थ्य की गंभीर समस्या बन गई है। यह जानते हुए भी कि समुद्री शैवाल सस्ता और मूल्यवान खाद्य पदार्थ है, जो अयोडिन की कमी को दूर कर सकता है, लोग इसको आहार के रूप में स्वीकार करने में तैयार नहीं होते हैं। भारतीय जनता के आहार में समुद्री शैवालों को भी मिलाने पर प्रोटीन, आवश्यक अमिनो आसिड, विटामिन, खनिज और अयोडिन की प्रतिपूर्ति हो जाएगी।

विश्व के पूरे महासागरों और समुद्रों में लाल शैवाल की 6000, भुरे शैवाल की 2000 और हरे शैवाल की 1200 जातियाँ पायी जाती हैं जिनमें कुछ भी विषाक्त नहीं है और इन्हें स्वादिष्ट खाद्य के रूप में माना जाता है। लंबे अरसे से लेकर शैवाल चीन और जापान के लोगों के आहार का मुख्य भाग है। 600 बी सी में ज़ी टियू ने चीन भाषा में लिखा है "कुछ शैवाल ऐसे हैं जो अत्यधिक सम्मानित अतिथियों और राजा को स्वादिष्ट भोजन के रूप में दिया जाता था"। इक्कीस शैवाल जातियों को जापान के दैनिक पकवान में सम्मिलित किया जाता है और इन में से छः जातियों को 8 वीं सदी से लेकर आहार के रूप में उपयुक्त किया गया है। जापान में वर्ष 1973 के दौरान लोगों के आहार का 10% समुद्री शैवाल था जो वर्ष 1983 में 20% तक बढ़ गया। इनमें प्रमुख शैवाल हैं नोरी (पोरफिरा जाति), कोम्बू (लामिनेरिया जाति) और वाकेम (अन्डेरिया जाति), नोरी के सूखे भार का 25-35% प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज हैं। नोरी में विटामिन - सी की मात्रा सन्तरा की अपेक्षा 1.5 गुनी अधिक है। शैवालों के 75% प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट मानव के लिए पाचन योग्य हैं। अयरलान्ड और स्कोटलान्ड में वर्षों से पहले खाने के लिए उपयुक्त किए जाने वाला लाल समुद्री शैवाल है पलमारिया पलमटा। चीन, जापान और कोरिया में समुद्री शैवालों का परंपरागत रूप से उपयोग किया जाता है और पश्चिमी धारणाओं से इन देशों की पुरानी परम्परा अभी तक बदली नहीं है। पश्चिमी देशों में समुद्री शैवालों को स्वास्थ्य खाद्य के रूप में माना जाता है। आधुनिक नागरिकता के प्रभाव से यूरोप, आफ्रिका और अमरीका के लोगों के खाद्य के स्वभाव में काफ़ी बदलाव हो चुका है। समुद्री शैवालों में मानव शरीर से भारी धातुओं और रेडियोएक्टिवता निकालने की क्षमता होने पर भी इसे अपने खाद्य के रूप में उपयुक्त करने के लिए वे तैयार नहीं थे।

आइरिष शासन काल 1845-1849 के दौरान यूरोप में निम्नलिखित कारणों से शैवालों को सबसे प्रमुख खाद्य के रूप में माना गया था :-

जनसंख्या में 5.4 मिलियन से 8.2 मिलियन तक की बढ़ती

आलू में फाइटोप्तोरा रोग का ग्रसन

आइरिष की भेड़ों और गेहूँ को वहाँ के लोगों द्वारा उपयुक्त न करने और इंग्लैन्ड को निर्यात करने के लिए ब्रिटीश द्वारा प्रभाव।

इस परिस्थिति में लगभग 5,00,000 लोग भूखे मरे और आइरिष जनता ने खाद्य के लिए आइरिष मोस (कोन्ड्रस क्रिस्पस) नामक स्थूल शैवाल (macro algae) की खोज की। वर्ष 1960 के दौरान विकसित देशों में मानव खाद्य में शैवाल को भी सम्मिलित करने लगा लेकिन चीन और जापान के अतिरिक्त अन्य देशों में शैवाल जैसे पौधे को

समुद्री शैवाल से बनाए डिब्बाबंद खाद्य

आहार के रूप में स्वीकार करने में ज़्यादा मान्यता नहीं दी गई। बीसवीं सदी में यह साबित हुआ है कि समुद्री शैवाल एक ऐसा खाद्य है जो जैविक ढंग से अभी तक ज़ोड-तोड

नहीं किया गया है, इसकी प्राकृतिक औषधीय शक्ति इसकी पौष्टिकता, औषधीयता और ऊर्जा से प्राप्त की जा सकती है। क्रीमर जैसे वैज्ञानिकों के अनुसार समुद्री शैवालों में ऐसी पारम्परिक पौष्टिकता है जो मांस, मछली, भूमि में पैदा किए जाने वाले अनाज, बीन्स और फंजे से पौष्टिकता के बदले उपयोग किया जा सकता है।

भारत समुद्री शैवाल संपदाओं से समृद्ध देश है।

समुद्री शैवाल सालड़

भारत में 800 से ज़्यादा जातियों के शैवाल पाए जाते हैं जिनमें 60 वाणिज्यिक प्रमुख भी हैं। ये भारत के दक्षिण, पूर्व और पश्चिम तटों में फैले गए हैं। भारतीय शैवाल आहार की दृष्टि से प्रमुख हैं। अलवा, पोरफिश, एकान्तोफोरा, सेन्ट्रोसिरस जैसे शैवालों में सूखे भार में ही 16-30% प्रोटीन होता है। इनमें मानव आहार के लिए आवश्यक मेथियोनिन, ट्रिप्टोफान जैसे अमिनोआसिड, जो सब्जियों में नहीं पाए जाते हैं, निहित हैं। खाद्य सुरक्षा और पोषण गुणता की दृष्टि से एन्टरोमोर्फा लिन्ज़ा, ई. प्रेलिफेरा, अल्वा फासिएटा, कॉलर्पा टाक्सिफोलिया और सरगासम जोनस्टोनी का मूल्यांकन किया गया था।

पोषण गुणताओं के बावजूद समुद्री शैवालों के औषधीय गुण भी उल्लेखनीय हैं। समुद्री शैवाल में हेपारिन की जैसी प्रतिस्कन्दक (anticoagulant) विशेषता है। यह हरित शैवाल हालिमेडा डिस्कोइडस में दिखाया पडता है और फाब्रिनोजन क फाइब्रिन में रूपांतरित न करने की प्रक्रिया में सहायता करती है। समुद्री शैवाल समुद्री औषधों और स्वास्थ्यकारी खाद्य के उत्पादन की दृष्टि से भी प्रमुख हैं। अतः नई औषधीय संपदा और मानव के स्वास्थ्य के लिए अच्छे खाद्य के रूप में समुद्री शैवालों का ज़्यादतर उपयोग किया जा सकता है। ■

समुद्री शैवालों में ऐसी पारम्परिक पौष्टिकता है जो मांस, मछली, भूमि में पैदा किए जाने वाले अनाज, बीन्स और फंजे से पौष्टिकता के बदले उपयोग किया जा सकता है।

-क्रीमर

मछली मानव स्वास्थ्य केलिए आदर्श खाद्य

आर. पॉल राज और इमेलडा जोसफ़
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

प्रोटीन और उस में सन्निविष्ट अमिनो आसिड से समृद्ध मछली मांस एक पौष्टिक आहार है। मछली मांस के सूखे भार में उच्च प्रोटीन बडे अनुपात में सन्निविष्ट है। मनुष्य को आवश्यक अमिनो अम्ल जैसे लैसीन, मेथियोनिन, अरिगीनन, ट्रिप्टोफान, थ्रियोनैन आदि मछली प्रोटीन में निहित है। पादप उत्पादों में ये अमिनो अम्ल कम मौजूद हैं। अन्य जन्तु मांसों की तुलना में मछली प्रोटीन में लैसीन अधिक होता है। मछली प्रोटीन की कम कलौरी (Calorie) की वजह से सब्जियों और खाद्यान्नों के साथ संपूरक खाद्य के रूप में इसका इस्तेमाल किया जाता है। वैसे मछली मांस में *कनक्टिव टिश्यू* भी कम है जो कि पौष्टिकता और पचन में घटिया चीज़ मानी जाती है।

लिपिडों में कई पौष्टिक गुण है जो कि प्रोटीन में नहीं है। ये ऊर्जा के साथ ही साथ वसा विलीन वैटामिनों (A, D, E और K) प्रदान करते हैं। मछली में अन्य जन्तु मांसों (मुर्गी, मट्टन, पोर्क) की तुलना में वसा कम है। कम कोलस्ट्रॉल और अधिक मात्रा में बहु असंतृप्त वसा अम्ल (Poly unsaturated fatty acid) के कारण यह अनुयोज्य आहार है।

लिपिडों में निहित वसा अम्ल जैसे लीनोलीक (linoleic) और लीनोलेनिक (linolenic) अम्लों का संश्लेषण (synthesis) मानव शरीर में होता नहीं है। फिर भी कोशिकाओं में रोग नियंत्रण केलिए यह बहुत आवश्यक है। इनके संयुक्तों से खून का जम जाना (blood clotting) आस्तमा (astma), व्रण रोग आदि की चिकित्सा साध्य है। अध्ययनों ने व्यक्त किया है कि बहु असंतृप्त वसा अम्ल रक्तचाप और कोलस्ट्रॉल को कम करेगा जिस से हृदयाघात या हृदयरोगों की चिकित्सा केलिए यह अनुयोज्य है। इसके सिवा नेत्र (retina) और मस्तिष्क केलिए आवश्यक मत्स्य लिपिडों में यथाक्रम निहित डी एच ए (decosahexanaoic acid) और ई पी ए (eicosapentanoic acid) महत्वपूर्ण पौष्टिक है। मछली तेल से भरपूर आहार ब्लड शुगर (blood sugar) कम करने में अनुयोज्य देखा गया है।

मछली मांस विटामिनें जैसे A, B, C, D, E और K का अच्छा स्रोत है। मनुष्य शरीर के स्वास्थ्य और अनुरक्षण केलिए आवश्यक फोसफोरस और अयोडिन जैसे मिनेरल भी इस मांस में हैं।

अतः अन्य जन्तु मांसों (मुर्गी, मट्टन, पोर्क) की तुलना में स्वास्थ्य की दृष्टि से यह आदर्श खाद्य है। ■

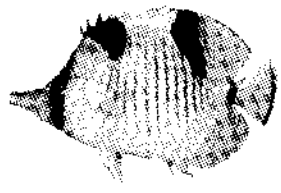

परुषकवची मात्स्यिकी-खाद्य पूर्ति का औज़ार (गुजरात के प्रसंग में)

जो के. किषकूडन और बी.पी. तुम्बर
सी एम एफ आर आइ का वेरावल क्षेत्रीय केंद्र, वेरावल

दुनिया में क्रस्टेशियाई याने कि परुषकवची संपदाएं ताजा और शीतीकृत रूप में बडी मांग की मछलियाँ रही है। इसलिए इसके विदोहन केलए हरसंभव कोशिश हो रहे हैं। भारत की स्थिति भी इस से अलग नहीं है यहाँ ट्रॉल नेट के ज़रिए इनकी ज्यादा पकड हो रही है। माँग के अनुसार इनकी बढती पकड हो रही है जिस से इन संपदाओं की उपलब्धि में स्थिरता या कमी भी दिखाई पडती है।

गुजरात के समुद्र तटों में 50 के निकट परुषकवची संपदाएं हैं जो कि यहाँ के जैव वैविद्यता के उत्तम उदाहरण हैं। राज्य के मात्स्यिकी उत्पादन में ये संपदाएं सारभूत योगदान दे रहे हैं। इस क्षेत्र में ऐसे अनेक नितलस्थ और अनुवेलापवर्ती (प्लवरूपियों को छोडकर) संपदाएं भी हैं जिनका विदोहन अब तक नहीं हुआ है।

गुजरात की परुषकवची मात्स्यिकी

गुजरात के समुद्र में बिखरे पडे परुषकवची संपदाओं की सूची तालिका 1 में दिखाई गई है। संपदाओं का वैज्ञानिक और स्थानीय नाम इस में दिखाए गए हैं। इन संपदाओं की पकड विविध प्रकार के यंत्रीकृत और परंपरागत गिअरों के ज़रिए होता है। संपदा की माँग के अनुसार उपलब्ध क्षेत्रों में मत्स्यन कार्य होता है।

परंपरागत क्षेत्र

परंपरागत सेक्टर का मतलब तटीय समुद्र और तट के आस पास फैले हुए अनेक ज्वारनदमुखियों और नमकीन संकरी खाडियों से हैं।

संकरी खाडी मछली

लिटिल रान ऑफ कच बनस, सरस्वती और माचु नदियों के कच खाडी का संगम स्थान है। मनसून काल में यह चिंगटियों का अशनगाह हो जाता है। यह पादपप्लंवकों के वर्द्धित उपलब्धि से होता है। इन्हें खाते हुए पलनेवाली चिंगटी है *मेटापेनिअस कचेनसिस*। मनसून के दौरान के बारिशों पर निर्भर रहने के कारण यह मौसमिक है। *कटर* नामक विशेष प्रकार के फेन्स नेट से इन्हें पकडा जाता है। चेरा, नंगावाडी, अप्रेशन, मलिया, अंजियासेर, नादाबेर, टिक्कर और सूरजबरी प्रमुख प्रकड केंद्र हैं।

सौराष्ट्र की संकरी खाडियों की चिंगट मात्स्यिकी

सौराष्ट्र - नवाबंदर शिल, पोरबंदर, कोखाड, मंगोलबारा, सीमारे की संकरी खाडियों में मनसून के मौसम में चिंगट *कचेनसिस* पैदा होता है। पुलि झींगा, *पेनिअस मोनोडॉन* भी जून-दिसंबर के दौरान उपलब्ध होते है। यहाँ पाए जानेवाला *पी. मोनोडॉल* अंडशावक के रूप में बेचा जाता है। जालेश्वर की संकरी खाडियों से भी इस दौरान मोनोसीरोस झींगा की अच्छी पकड प्राप्त होती है। इन खाडियों से चिंगटों को पकडने केलिए छोटी जालाक्षिवाला गिलनेट, V आकार का बैग नेट, ड्राग नेट और कास्ट नेट का परिचालन होता है। स्थानीय नाम 'वेदी जाल' से अभिहित ड्रागनेट से ड्यू-गोघला - वनकभरा के उथलीय पानी से इंडिकस, मेरगुनेनसिस, मोनोडॉन झींगो, ब्रेविकोर्निस कचेनसिस चिंगटों के तरुणों को पकडा जाता है। 1.5 मी गहराई में 2-4 मी विस्तार में जाल बांस के खंभों के ज़रिए बिसेरकर इन्हें पकडा जाता है।

पट्टा मात्स्यिकी

मीलें लंबी छोटी जालाक्षिवाले (15 - 20 मि.मि.) गिल जालों के ज़रिए जमनगर, भवनगर और गोधा से ज्वार के समय के पानी बहाव से चिंगटों को पकडा जाता है। *मोनोसिरस, कचेनसिस, ब्रेविकोर्निस* चिंगट और झींगा *जापोनिकस* इसकी मुख्य पकड है।

केकडा मात्स्यिकी

कच, पोरबंदर, वंकभरा, डियू, पटान, नवाबंदर और मिलानी की संकरी खाडियों के प्रवालीय और कीचडी प्रदेश केकडाओं का आवास क्षेत्र है। *पेलाजिकस, सातगुनोलेन्टस* और *सिल्ला सेराटा* केकडे यहाँ से पकडे जाते हैं। मत्स्यन अम्ब्रेला नेट ट्राप के ज़रिए होता है। कच के मछुए छोटी जालाक्षीवाले गिल व ट्राप जालों के प्रयोग करते हुए *पेलाजिकस* केकडें को पकडता है। पटान में लंबी जालाक्षिवाले गिल जाल (120-140 मि मी) के ज़रिए पेलाजिकस केकडों को पकडा जाता है। नवाबंदर की संकरी खाडियों से *तलामिटा क्रिनेटा, कारबिस अनुलेटा, माटुटा प्लानिपेस, एस. सेराटा, पी. पेलाजिकस और पी. सानगुनोलेन्टिस* आदि केकडे भी मिलते हैं।

भवनगर और माहुआ तटों में केकडा प्लनिपस उपलब्ध होता है। निम्न ज्वार के समय जब जल में चलना आसान होता है तब कुंतों और चिमटियों से इन्हें पकडते हैं।

तटीय मात्स्यिकी

धोल्वा मात्स्यिकी

लंबे बाग जालों की श्रेणी जो कि खंभों के ज़रिए नियत किया हो, का स्थानीय नाम है धोलवा। भवनगर, गोधा, माहुआ, सरतनपारा और अलांग की तटरेखा में धोल्वा के परिचलन से *असेटस, सोलनोसीरस* मछलियाँ और ब्रेविकॉरनिस, कचनासिस चिंगटियाँ पकडी जाती है। कच खाडी के मछुए भी चिंगटों को पकडने के लिए धोल्वा का प्रयोग करते हैं।

गिलजाल मात्स्यिकी

2-5 फैदम में 40-80 मि मी जलाक्षिवाले फिल्मेन्टी गिल जालों का प्रचालन होता है ताकि झींगे *मेरगुएनसिस, मोनोडॉन, कचेनसिस* पकडा जा सके। शूली महाचिंगट *पानुलीरस पॉलिफागस पी. होमारस, पी. वेसिकॉलर* को पकडने केलिए गिल जलों के टुकडों को ट्राप के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

बाहरी इंजनों से चलनेवाला ट्रालर

वनकबारा के तटीय समुद्र के रेतीले संस्तरों से झींगे जैसे *मेरगुइनसिस, इंडिकस, मोनोडॉन, कचेनसिस, ब्रविकॉर्निस, स्कलपिटिलस* को पकडने केलिए छोटे ओटर ट्रालों का प्रयोग होता है।

यंत्रीकृत सेक्टर

गुजरात के 20-100 मी. गहराई के तटों में यंत्रीकृत मत्स्यन रीतियाँ भी चलती है।

डॉल नेट मात्स्यिकी

जडे हुए बाग नेटों को 'डॉल नेट' कहते हैं। परिचालन के समय ये पानी के भीतर बिछाए होंगे। इसके ज़रिए नॉन-पेनिअइड झींगे जैसे *नेमाटोपालेमन टेनूपिस असेटस जातियाँ, ई. इनसिरोस्ट्रिस* और पेनिअइड झींगे *पी. स्टाइलिफेरा, पी. हार्डविकी, सेलनोसीरा चौप्रै, एस. क्रासिकोर्निस पी. स्कलप्टिलस* चिंगट *कचेनसिस* और केकडे सी. *फेरियाटस, सान्गुनोलेन्टस* और *एम. प्लानिपस* मिलते हैं।

ट्राल नेट मात्स्यिकी

द्वारका और सौराष्ट्र के आनायन तल विश्व में वैविद्यपूर्ण पखमछली और कवचमछलियों की पकड केलिए मशहूर हुए हैं। मत्स्यन 1-3 दिवसों की छोटी और 5-8 दिवसों का बडी अवधि की होती है। छोटी अवधि के मत्स्यन में तटीय चिंगटों की कई जातियाँ मिलती है। लंबी मत्स्यन में भी पेनिआइड और नॉन पेनिअइड झींगों की कई जातियाँ भी प्राप्त होती है। पंक शूली महाचिंगट *पी. पोलिफागस*, रेत महाचिंगट *थेनिअस ऑरियोन्टालिस* भी कम मात्रा में प्राप्त होती है। उच्च और कम दाम के कई केकडा जातियाँ भी ट्राल परिचालन में प्राप्त होती है।

1971-2000 के दौरान गुजरात में मिली कुल मछली पकड का 17% कवचप्राणियों का था। इनकी वृद्धि भी क्रमिक थी याने कि 971 में 7.4% रहा इसकी पकड 2000 को 23.4% हो गया। पहले यहाँ पेनिअइड झींगों की प्रचुरता थी पर बाद में यह घटने लगी। वैसे महाचिंगटों की पकड में भी घटती दिखाई पडती है। लेकिन केकडों की पकड में वर्ष 1985 तक बढती दिखाने पर बाद में घटती की प्रवणता ही दिखाई पडती है।

मत्स्यन रीतियों की बात कह जाएं तो पकड का 95% यंत्रीकृत सेक्टर का योगदान है बाकी 5% परंपरागत सेक्टर का भी। यंत्रीकृत सेक्टर में 80% ट्रालर और 15% डॉल जालों का योगदान है। कवच मछलियों की पकड में 90 के दशक में हुई बढती नॉन पेनिअइड झींगा *असेटस* जातियों के योगदान के कारण है।

परंपरागत मत्स्यन सेक्टर का योगदान कम होते हुए भी इसकी महत्ता को नकारा नहीं जा सकता। तटीय समुद्र के प्रदूषण से चिंगटों और शूली महाचिंगटों की पकड में कमी हुई है। फिर भी भवनगर कच की खाडी के केकडे मत्स्यन में टिकाऊ व चयनात्मक मत्स्यन रीति के कारण कमी नहीं हुए हैं।

कुलमिलाकर कह जाएं तो गुजरात के तट में कई महंगे झींगों, चिंगटों और केकडों की उपलब्धि में कमी दिखाई पडती है। इसका कारण अति विदोहन हो या पर्यावरणीय, समाधान ढूँढ निकालना अनिवार्य है। साथ ही साथ संपदाओं के वर्धन के लिए अनुयोग्य उपाय जैसे इनकी पालन और समुद्र रैंचन रीतियों का विकास करना है। पकड नियंत्रण सम्बन्धी नियमों का विनियमन इस संपदा के टिकाऊपन और संरक्षण के मामले में संगत है। आशा है सुझाए गए मदों के कार्यान्वयन पर अति विशिष्ट समुद्री कवच प्राणी संपदा हमारे खाद्य पोषण की पूर्ति के औज़ार बनके रहेंगे।

चित्र : कुल समुद्री पकड में परुषकवचियों
का प्रतिशत योगदान : गुजरात 1971-2000

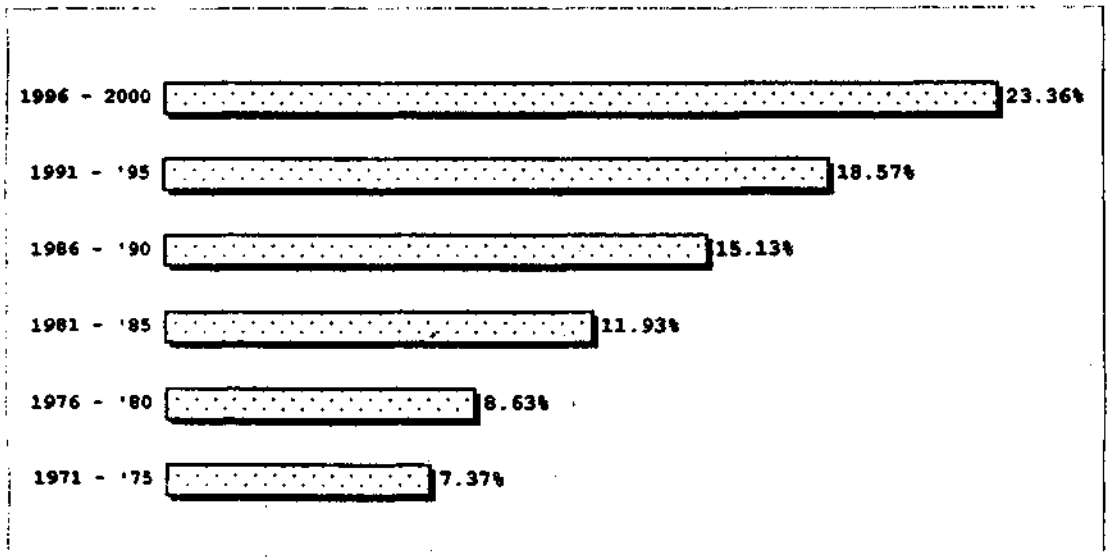

तालिका 1: गुजरात की परुषकवची मात्स्यिकी संपदा

वैज्ञानिक नाम	सामान्य नाम (गुजराती)	वैज्ञानिक नाम	सामान्य नाम (गुजराती)
पेनिअइड झींगा		*Nematopalaemon tenuipes*	वाइट कोल्मी
Metapenaeus affinis	मीडियम जिंगा/सोनिया	*Exhippolysmata ensirostris*	डोडी
M. brevicornis	"	***महाचिंगट***	
M. kutchensis	"	*Panulirus homarus*	भाटियो
M. monoceros	काप्सी जिंगा	*P. ornatus*	"
Metapenaeopsis stridulans	धेबरी	*P. polyphagus*	टैटान/टिटी/जिंगा
Parapenaeus longipes	भूसी	*P. versicolor*	पट्टावलो
Parapenaeopsis hardwickii	कोल्मी/टैनी	*Thenus orientalis*	कका
P. sculptilis	पट्टा कोलमी	***केकडा***	
P. stylifera	कोल्मी/टैनी/जिंगी	*Calappa lophas*	करचाला
Penaeus indicus	जिंगी	*Matuta planipes*	"
P. merguiensis	वाइट जम्बो	*Charybdis feriatus*	"
P. pencillatus	"	*C. hoplites*	"
P. latisulcatus	पट्टा जम्बो	*C. annulata*	"
P. japonicus	जिंगा	*C. leucifera*	"
P. monodon	टाइगर जम्बो	*Portunus pelagicus*	खेकडा/करचाला
P. semisulcatus	पट्टा जम्बो/प्लवर	*P. sanguinolentes*	करचाला
Trachypenaeus curvirostris	कोल्मी	*Scylla serrata*	करचाला/लोदन
Solenocera choprai	लालकोल्मी/जोग्नी	*Thalamita crenata*	करचाला
S. crassicornis	"	*Atergatis spp.*	"
नॉन पेनिअइड झींगा		*Macrophthalmus pectinipes*	चरोला
Acetes indicus	जावला/गोलबो	***रंध्रपाद***	
A johni	"	*Oratosquilla nepa*	विंचि कन्ता

झींगा उत्पादन और खाद्य सुरक्षा

मिरियम पॉल
सी एम एफ आर आइ का विशाखपट्टणम क्षेत्रीय केंद्र, विशाखपट्टणम

1996 में हुए विश्व भोजन शिखर सम्मेलन में खाद्य सुरक्षा को रेखांकित करते समय कहा गया था "... हर व्यक्ति को, हर समय, आवश्यक, सुरक्षित और पौष्टिक भोजन शारीरिक और आर्थिक तौर पर उनके भोजनात्मक आवश्यकताओं व क्रियात्मक और तन्दुरुस्त जीवन के लिए उपलब्ध हो।" भारत की वर्तमान स्थिति इस आदर्श से बहुत दूर है। हमारी जनसंख्या का एक अहम विभाग दरिद्र रेखा के नीचे है। भारत के अनुमानित 90 लाख मछुओं में अधिकांश लोग, इस विभाग में शामिल है, खासकर लघु पैमाने के मत्स्यन में लगे हुए पारम्परिक मछुवारे।

पोषण के तौर पर, झींगा, प्रोटीन का एक मूल्यवान स्रोत है। लैसीन, बहु असंतृप्त वसा (Polyunsaturated fats) मिनरेल व धातु जैसे लघु तत्व भी झींगा मांस में उपलब्ध है। इसे जानवर प्रोटीन से ज्यादा पौष्टिक माना जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर झींगे के अधिकतम दाम में बिकने पर यह भोज्य आर्थिक और पौष्टिक तौर पर गरीबों के हाथ से बाहर हो गया है। अतः झींगा, भोज्य सुरक्षा के एक प्रत्यक्ष मार्ग से परोक्ष मार्ग बन गया। 1970 व 80 के दशकों के पूर्व जब झींगा मत्स्यन और कृषि की इतनी वृद्धि नहीं हुई थी तब झींगा दरिद्र मछुवारों के भोज्य का एक घटक था जो मत्स्य के समान दर्जे में खाया जाता था। जबसे झींगा एक उच्च श्रेणी का विदेशी मुद्रा शकल बना, तबसे वह एक अप्राप्त विलासप्रिय भोजन वस्तु बन गया है। अत : झींगे के बडे वर्ग, जो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उच्च श्रेणी में बिकते हैं, देशीय आन्तरिक बाज़ारों से और आम लोगों के भोजनरीति से गायब हो गए हैं। यद्यपि हमारी समुद्री मत्स्यन झींगा मत्स्यन की तरफ पूर्णाभिमुख्यता दिखाता है तथापि इसके फसल का एक छोटा भाग ही स्थानीय व्यापार में आता है। झींगा कृषि से उपलब्ध पैदावार का भी यही हाल है।

फलस्वरूप, झींगा मत्स्यन व कृषि का खाद्य सुरक्षा से प्रत्यक्ष तालुक सीमित है। परन्तु, तत्कालीन समुद्री मत्स्यन के बदलती प्रवणताओं की जाँच पर यह साफ होता है कि झींगों के बडे वर्गों को पकडते वक्त निर्यात के लिए, अनुचित वर्ग भी, बडे पैमाने में बटोरे जा रहे हैं। ये वर्ग स्थानीय बाज़ारों में बिकाऊ हैं। इनका दाम भी आम जनता के पहुँच में है। भविष्य में यह तटीय इलाकों के जनों में भोजन सुरक्षा का एकमात्र साधन बनेगा।

झींगा मत्स्यन व कृषि का परोक्ष प्रभाव, खाद्य सुरक्षा पर अवश्य पड़ता है। सूक्ष्म - आर्थिक दर्जे पर झींगा मत्स्यन या कृषि, इसमें शामिल लोगों के लिए आर्थिक समृद्धि लाती है। इस आर्थिक समृद्धि पर भोजन सुरक्षा आधारित है। परन्तु याथार्थ्य यह है कि ज्यादतर उपजीविका दर्जे पर रहते मछुवारों को इससे कोई लाभ नहीं मिलता लेकिन मध्यवर्तियों को इससे काफी मुनाफा हुआ है। उनकी भोजन सुरक्षा अवश्य बढ़ी है। झींगा व्यवसाय में सबसे ज्यादा मुनाफा बडे पैमाने के संनिवेशकों को मिलता है। ये भोजन सुरक्षा समस्या के कल्पना - क्षेत्र में नहीं पडते।

एक और परोक्ष मार्ग से, झींगा निर्यात भोजन सुरक्षा में योगदान देता है। झींगा द्वारा प्राप्त विदेशी मुद्रा से राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति का सुधार होता है। बृहत आर्थिक दर्जे पर इन कमाइयों का एक हिस्सा उचित दाम या साहायप्राप्त खाद्यवस्तु के रूप में भोज्य से असुरक्षित और पोषण की कमी से पीडित लोगों के लिए नियोजित किया जा सकता है।

पर्यावरण सुधार समितियाँ झींगा मत्स्यन और कृषि के खिलाफ अनेक मुद्दे उठाते हैं। इनमें से कुछ वास्तविक रूप के हैं। अर्ध - गहन झींगा कृषि में अपनाए गए कुछ रीतियाँ पर्यावरण के लिए हानिकारक हैं। जलाशयों का मलिनीकरण और मैंग्रोव वनों के नष्ट होने से स्थानीय लोगों के लिए लघु पैमाने का मत्स्यन व जीवनमार्ग नष्ट होता है। इससे भोजन सुरक्षा पर प्रत्यक्ष असर पड़ता है। उपजाऊ जमीन को झींगा खेतों में परिवर्तित करने पर और उसके श्रम विस्तापन होने पर भी भोजन सुरक्षा पर प्रभाव पड़ता है। परन्तु यह उसी माहौल में प्रचलित है जहाँ अयोजनाबद्ध परिवर्धन हुआ हो या झींगा कृषि करने की रीति में अप्रबन्ध हुआ हो। खासकर परम्परागत और विस्तृत कृषि रीतियों में यह समस्याएँ सीमित हैं। चावल-व-झींगा कृषि रीति या बहु संवर्धन संक्रियाओं में उपलब्ध साधन - स्रोत का महत्तम उपयोग होता है। आजकल के सोच में मैंग्रोव वनों में झींगा खेतों की स्थापना करना अनुचित माना जाता है, बल्कि झींगा खेतों के आसपास मैंग्रोव वनों को पुनःरोपित किया जाता है।

इसी तरह झींगा वर्गयुक्त ट्रालर मत्स्यन एक रूप में हानिकारक बताया जाता है क्योंकि इसमें झींगों के अलावा अन्य जीवों के बहुत बडी संख्या की उपपकड (बैकेच) के रूप में मत्स्यन के दौरान समुद्र में ही फेंका जाता है। ट्रालरों पर सुविधाओं की वृद्धि से इस मसले का हल काफी हद तक हो सकता है। इस बैकेच को तट तक लाकर स्थानीय बाज़ारों में बेचा जा सकता है या इससे मत्स्य आहार बनाया जा सकता है। इस सम्मिश्र मामले को सुलझाने के लिए प्रभावी मत्स्यन प्रबन्ध आवश्यक है।

ऐसा एक यथार्थ झींगा व्यवसाय प्रवणता से जारी है कि इसमें धनीय संनिवेशक और भी मुनाफा कमाया करते हैं जब कि मुख्य उत्पादक जीवन - निर्वाह तल पर ही रह जाते हैं। उपभोक्ता या व्यापारी झींगा उत्पादन के सामूहिक या पर्यावरणिक कीमतों को नहीं चुकाते। इस भूमिका को बदलकर इनसे योगदान करना अनिवार्य बना देना जरूरी हैं। ऐसी नीतियाँ बनाई जानी चाहिए जिनसे इसे किसी कर के रूप में कायम किया जाए। इस कर से उपलब्ध पूँजी को पर्यावरण प्रत्यर्पण व निर्धन मछुवारों के उद्धार के लिए लगाया जाना चाहिए।

निर्यात मूल्य और प्रभार के भौतिक अनुमान से यह जाहिर होता है कि 1970 - 92 के बीच परुष कवचियों के असली कीमत में 29% की घटौती हुई है। इस अधोमुखी प्रवणता के बढ़ने की आशंका है। अन्य शब्दों में झींगो का उत्पादन बढ़ गया है पर प्रति टन का मूल्य गिर रहा है। निर्यात बाजार बहुत नाजुक भी है। अकसर झींगा व्यवसाय में निरोधों और कीमत कटौती के कारण भारी नुकसान झेलना पड़ता है। फलस्वरूप, हमें नए पश्च पैदावार प्रौद्योगिकी को उपयोग में लाकर आन्तरिक व्यापार को बढ़ावा देना चाहिए। केवल निर्यात पर आधारित झींगा व्यापार के अलावा आन्तरिक झींगा व्यापार को राष्ट्रीय तौर पर बढ़ावा मिलने से विश्व मंच पर भी भारत एक स्थायी दर्जे पर खड़ा हो सकता है। आर्थिक मुनाफा और भोजन सुरक्षा का अनुगमन इससे होगा।

अन्त में ऐसी नियमों और नीतियों की सख्त जरूरत है जिससे झींगा निर्यात से प्राप्त बडे मुनाफों का कुछ हिस्सा इस उद्यम में शामिल सबसे निचले दर्जे के मछुवारों तक पहूँचा जाए। यही इनके खाद्य सुरक्षा और उद्धार का मूलाधार रहेगा। ■

महासागरीय जैव संसाधनों का मानव हित में उपयोग

आशुतोष डी. देव एवं एम.सी. नन्दीया
कॉलिज ऑफ फिशरीज़, अगरतला

महासागरीय संसाधनों ने हमेशा से ही मानव समुदाय को विभिन्न कारणों से अपने ओर आकर्षित किया है। एक जैव परिवेष के रूप में महासागर पूरी पृथ्वी के जैवों का 4/5 वाँ भाग, जो कि 30 फाइलम और 5,00,000 स्पीसीज से भी अधिक है, धारण करता है। (मार डरोसियन, 1968)

महासागरीय प्राकृतिक उत्पाद जिस पर पूर्ण रूपेण वैज्ञानिक शोध पिछले चालीस साल से चल रहा है अब तक 6,500 की संख्या को पार कर चुका है। समुद्री जीवन न कि सिर्फ औषध-भेषजीय तत्व से सुपरिष्कृत हैं बल्कि विष पदार्थ के निर्माण में भी सक्षम हैं।

वैज्ञानिकों ने इसी प्रकार के जहर जो मनुष्यों में समुद्री जीवों के भक्षण से प्राप्त होता है, विलग कर रासायनिक पहचान किया है।

कुछ समुद्री जीव खुद से जहर के निर्माण करने में असमर्थ होते हैं, पर उनमें जहर का संचयन उनके द्वारा भोजन किये गये पदार्थ के द्वारा हो जाता है। प्रायः समुद्री जीवों में जहर का निर्माण जीवाणुओं के द्वारा या फिर डाईनो फ्लैजेलेट के द्वारा होता है। (भारुनी, 1997)

जैव वैज्ञानिकों ने अपने कठिन मेहनत से ऐसे बहुत से जैव सक्रिय पदार्थों का पता लगाया है, जिसका उपयोग मानव के विभिन्न व्याधियों को ठीक करने में किया जा सकता है। अब तक समुद्री जीवों से जो औषधि निकली है उनके कुछ नाम हैं - केंसर प्रतिरोधी, प्रति जैविकी, विकास दर बढ़ाने और घटाने की दवा, रक्त विखण्डक, रक्त अभिश्लिष्टक, वेदना अवरोधक, उच्चरक्त चाप एवं निम्न रक्त चाप की औषधि आदि।

वर्गीय आधार पर कुछ जीवों से प्राप्त औषधियों का विवरण कुछ इस प्रकार है :-

(2) समुद्री शैवाल :

अब तक समुद्री शैवालों से, ब्रोमीनेटेड फेनोल, आक्सीज हेटरोसाइक्लस, नाइट्रोजन हेट्रोसाइकल्स, स्टेरॉल्स एवं प्रोटीन प्राप्त किये जा चुके हैं। हालांकि समुद्री शैवाल से प्राप्त ब्रोमीनेटेड फेनोल जहरीले पाये जाते हैं अतः उसका मानव चिकित्सा हेतु उपभोग की संभावना बहुत कम ही है, फिर भी शोध जारी है। नाइट्रोजन हेटरो साइकल्स (डोमीक अम्ल व काइनिक अम्ल) परजीवी प्रतिरोधी के रूप में काफी महत्वपूर्ण साबित हुए हैं। सूखा लाल शैवाल *डाइजीनीयाँ सिम्पलेक्स* का उपयोग एन्टी होलमेन्थिक औषधि के रूप में काफी प्रचालित है। गंधकीकृत बहुसर्करा कारागीनन, अगर, अगरोज आदि जो लाल शैवाल से प्राप्त होते हैं, मानव हित में काफी लाभदायक सिद्ध हुए हैं। कारागीनन में एन्टी कोगुलेन्ट एवं विषाणु प्रतिरोधी गुण सिद्ध हो चुके है। पेट में अल्सर के निदान में भी कारागीनन भरोसे मन्द साबित हुआ है। सोडियम अल्जीनेट का उपयोग इम्यूनाइसेशन में भी हुआ है लेकिन मानव शरीर से स्ट्रानसियम निष्कासन में यह काफी प्रभावी पाया गया है। अगर एवं अगरोज का उपयोग बयो मेडिकल विज्ञान में सर्व विदित है।

a) समुद्री जीवाणु एवं कवक

समुद्री जीवाणु एवं कवकों से एन्टीबायोटिक, एन्टी वाइरस, एन्टी फन्गल एवं एन्टी केन्सर तत्व अभी तक प्राप्त किये जा चुके हैं। सिफेलो स्पांरीन नामक एन्टी बायोटिक का निष्कर्षण एक तरह के समुद्री शैवाल सिफेलो स्पोरियम एफ्री मोनियम से किया गया है।

एक तरह का ब्रोमी फेनाल एन्टीबायोटिक जो कि ग्राम पोसीटीव बैक्टीरिया पर फाफी प्रभावी है का निर्माण, समुद्री बैक्टीरिया *स्यूडोमोनास ब्रोमोयूरिलिसा* से किया गया है।

(iii) समुद्री अकशेरुक (इनवेर्टीब्रेट) संसाधन :

समुद्री अकशेरुक जैसे जेली फिश, सी एनीमोन, कोरल्स, मोलस्क, एकिनोडेर्म एवं क्रस्टेशियन आदि से विभिन्न तरह के स्टेरॉल्स, क्वीनोल्स, ब्रोमिनेटड यौगिक, नाइट्रोजन हेटरोसाइकिल्स एवं नाइट्रोजन सल्फर हेटरोसाइक्लस आदि प्राप्त हुए हैं।

होलोथूरिया से प्राप्त स्टेराइल पदार्थ कैंसर प्रतिरोधी गुणों से भरपूर पाया गया है। गारगोनियन से प्राप्त टसपेनाइट्स की उपयोगिता जीवाणु प्रतिरोधी एवं अमीबा प्रतिरोधी तत्व के रूप में की जा चुकी है। स्पंज से प्राप्त प्रोस्टाग्लांदेन एवं ब्रोमिनेटड यौगिकों का मानव हित में उपयोग सर्व विदित है। समुद्र से प्राप्त डाइसीडिया हर्बेसिया नामक स्पंज का सार एक बहुत ही प्रभावी जीवाणु प्रतिरोधी यौगिक है जो ग्राम पोज़िटीव और ग्राम नेगटीव दोनों जीवाणुओं पर काम के लिए प्रतिविदित हो चुका है।

सेक्सी टोक्सिन जो समुद्री क्लैम व मसल से प्राप्त होता है, का उपयोग हाइपोटेनसिव औषधि के रूप में किया जा रहा है।

समुद्री जंतुओं से प्राप्त पेप्टाइड जैविक आधार पर काफी सक्रिय होते हैं इसका उपयोग एन्टी बयोटिक औषधि, कैंसर अवरोधी, दर्द निवारक औषधि के रूप में किया जाता है।

कशेरुक संसाधन

टेट्रोडोक्सीन जो, सर्वप्रथम पफर नामक मछली से मिला था, का उपयोग दर्द निवारक अंत्य औषधि के रूप में कैंसर के लिए होता है। इस के अलावा इसका उपयोग टेंसन बीमारी में दर्द से छुटकारा प्राप्त करने में भी होता है। समुद्री कैट फिश के स्लेष्मा में घाव भरने की क्षमता पाई गई है। ऐसी समुद्री मछलियों, जिनके पक्ष कांटेदार होते हैं, उनके कांटों के अंदर की ग्रंथियों में जैव सक्रिय पदार्थ होते हैं जिनका उपयोग रक्तचाप बढ़ाने, घटाने, रक्त जम जाने रोकना आदि के औषधियों के रूप में किया जा सकता है।

मछलियों से प्राप्त विभिन्न विषों में भी जैव सक्रियता पाई गई है जिसका उपयोग विभिन्न व्याधियों से छुटकारा प्राप्त करने में किया जा सकता है।

निष्कर्ष

वैज्ञानिकों के कठिन परिश्रम ने समुद्री जैविक संसाधनों का औषधि के रूप में उपयोग की महत्ता को पूरी तरह से पतिष्ठित कर दिया है और उनमें से कुछ तो रोग-विषयक कार्य में भी प्रयुक्त हुए हैं। उपकरणों एवं ज्ञान के सतत् विकास ने इसे और आसान बना दिया है लेकिन इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि यह एक विकासशील प्रक्षेत्र है जो विभिन्न विधाओं के वैज्ञानिकों को एक साथ बैठकर काम करने को आमंत्रित करती है।

भारतीय समुद्री जैविक संसाधनों के परिप्रेक्ष्य में भी देखने पर यह प्रक्षेत्र काफ़ी महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। ■

मत्स्य खाद्यों की सुरक्षा केलिए व्यवस्था

जोसलीन जोस
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

खाद्य की सुरक्षा 1960 के दशकों में पिल्सबरी कंपनी, युनाइटड स्टेट आर्मी और युनाइटड स्टेट के राष्ट्रीय वैमानिकी एवं अंतरिक्ष प्रशासन (नासा) द्वारा संयुक्त रूप से विकसित किया गया चमत्कारी कार्यक्रम है। बाद में 'सुरक्षित खाद्य' के उत्पादन में प्रभावकारी उपाय के रूप में यह व्यापक रूप से स्वीकार्य हो गया। समुद्री खाद्य का आयात करनेवाले अधिकांश प्रमुख देशों ने यह अधिदेश बनाया है कि निर्यातक के खाद्य संसाधन एककों को संकट विश्लेषण तथा क्रांतिक नियंत्रण मान (Hazard Analysis and Critical control point) का अनुपालन करने चाहिएं।

पहले व्यक्त किए गए अनुसार एक सुस्पष्ट सुरक्षित खाद्य की व्यवस्था के लिए *नासा* द्वारा की गई खोज का कारण अंतरिक्ष में वैमानिकों द्वारा खानेवाले खाद्य में त्रुटि (जीरो डिफेक्ट) सुनिश्चित करना था। वर्ष 1971 में पिल्सबरी कम्पनी ने एक खाद्य सम्मेलन में HACCP धारणा प्रस्तुत की तो इस चमत्कार को स्वीकारने में दुनिया तैयार नहीं था। लेकिन बाद में यह साबित हो गया कि यह धारणा खाद्य सुरक्षा की समस्याओं और जोखिम का सामना करने में सफल है। इस के उपरांत 1980 के प्रारंभिक वर्षों में प्रमुख खाद्य कंपनियों ने HACCP व्यवस्था स्वीकार की।

कई अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों और समूहों ने खाद्य सुरक्षा की HACCP व्यवस्था के विस्तृत प्रयोग का सिफारिश किया जिनमें युनाइटड स्टेट का खाद्य एवं औषध प्रशासन (FDA), युनाइटड स्टेट का राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, संघ खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO), यूरोपियन यूनियन (EU), इन्टरनाशनल कमीशन ओन माइक्रोबयोलजिकल स्पेसिफिकेशन फोर फुड्स (ICMSF) और दूध और पर्यावरणीय स्वास्थ्य का अंतर्राष्ट्रीय संघ (IAMFES) सम्मिलित हैं।

भारत में समुद्री खाद्य निर्यात सेक्टर में एच ए सी सी पी व्यवस्था के कार्यान्वयन का स्तर

भारत में आधुनिक समुद्री खाद्य निर्यात विपणन 1950 के वर्षों में शुरू हुआ। समय समय पर सरकार ने खाद्य सुरक्षा पर होने वाले मामलों को दूर करने और उत्पाद की गुणता बढ़ाने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार की गुणता नियंत्रण व्यवस्थाएं (जैसे IPQC, MIPQC, स्वतः प्रामाणीकरण व्यवस्था आदि) लगायीं। समुद्री खाद्य संसाधन (निर्यात के लिए) उद्योग में HACCP व्यवस्था का कार्यान्वयन 1990 के वर्षों में लागू कर दिया गया। यू एस एफ डी ए और यूरोप्यन यूनियन अनुबंध द्वारा खाद्य संसाधन प्लान्टों में HACCP के कार्यान्वयन के लिए कड़ा अनुरोध किए जाने के बाद निर्यातकों को इस व्यवस्था का पालन करना पडा। फिर भी अधिकांश निर्यातकों ने आयात करनेवाले देशों की कानूनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इस व्यवस्था का अनुपालन करना शुरू किया तथापि बाद में खाद्य की सुरक्षा सुनिश्चित करने में इस व्यवस्था की प्रभावकारिता पर वे भी सहमत हुए।

HACCP व्यवस्था होते हुए भी निर्यात की अस्वीकृति क्यों?

एच ए सी सी पी व्यवस्था लागू होने पर भी आयात करनेवाले देशों द्वारा उत्पादों की अस्वीकृति भारत के समुद्री खाद्य निर्यातकों के लिए चिंता का विषय बन गया है। यह केवल भारत की समस्या नहीं है एशिया के कई अन्य समुद्री खाद्य उत्पादकों के सामने भी यही समस्या पैदा हुई है। इस अस्वीकृति के कारण नीचे दिए जाते हैं:

1 विपणन कारण

बार बार यह रिपोर्ट मिलता रहता है कि समुद्री खाद्य आयात करनेवाले देश उत्पादों की मांग कम होने पर अस्वीकृति के लिए उत्पाद की सुरक्षा गुणता आदि पर झूठी दावा करते हैं। आयातित देश बाज़ार मांग में कमी स्पर्द्धा, मूल्य ह्रास आदि कारणों से जानबूझकर ऐसा करते होंगे।

2. राजनीतिक कारण

उत्पादों की अस्वीकृति के लिए राजनीतिक कारणों का सबूत न होने पर भी कुछ आयातक देशों द्वारा समुद्री उत्पादों की अस्वीकृति की गई है जिसका कारण राजनीति होने का संदेह है।

3. आंतरिक कारण

आयातक देशों द्वारा समुद्री खाद्य उत्पादों की अस्वीकृति केलिए आंतरिक कारण स्वास्थ्य सुरक्षा की कमी, उत्पादों का सुरक्षित प्रबंधन की कमी आदि सुरक्षा संबंधी मामले होंगे। कुछ संसाधन एककों में एच ए सी सी पी का नाम के वास्ते कार्यान्वयन (कृत्रिम दस्तावेजों, रिकार्ड तथा रिपोर्टों की तैयारी तथा रख रखाव) व्यवस्थापन एजेन्सियों को संतुष्ट कराने के लिए या आयातक देशों के अनुबंधन की पूर्ति के लिए किया जाता है।

एच ए सी सी पी कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए अवसंरचनात्मक सुविधाओं की अपर्याप्तता एक और कारण है। इस मामले में संसाधन एकक द्वारा एच ए सी सी पी व्यवस्था का उचित कार्यान्वयन किया होगा लेकिन क्रांतिक नियंत्रण मान, अनुचित या अपर्याप्त वैधीकरण/जाँच आदि की वज़ह से एच ए सी सी पी व्यवस्था भी अपर्याप्त हो जाएगी जो उत्पादों के निर्यात की असमर्थता का कारण भी बन जाएगी।

निर्यात उद्योग की निरंतरता की दृष्टि से समुद्री खाद्य उत्पादकों को अधिदेश की आवश्यकता की अपेक्षा एच ए सी सी पी व्यवस्था का कड़ा अनुपालन करने के संबंध में अवबोध जगाने का दायित्व व्यवस्थापन निकायों, विपणन संघों तथा अनुसंधान संगठनों पर निर्भर है।

भारत में घरेलू मात्स्यिकी में एच ए सी सी पी व्यवस्था के कार्यान्वयन की स्थिति

कई संसाधन एककों (स्थानीय खपत के लिए मछली एवं मात्स्यिकी उत्पादों का संसाधन करते है) के परिचालन में एच ए सी सी पी व्यवस्था का कार्यान्वयन किया गया है फिर भी घरेलू मछली संसाधन सेक्टरों या मछली का इस्तेमाल होनेवाले एककों में एच ए सी सी पी व्यवस्था की धारणाओं का पूर्णतः अनुपालन नहीं किया जाता है। इसके कारण नीचे दिए जाते हैं:

1. खाद्य सुरक्षा मामलों की प्रधानता पर अवबोध का अभाव - खाद्य संदूषण/खाद्य विषाक्तता (उत्पादों का अनुचित इस्तेमाल की वजह से) पर हुई दुर्घटनाओं के व्यक्त चित्रण में हुई अपर्याप्तता के कारण इसकी गंभीरता के बारे में प्राधिकारी गण या आम लोग अनभिज्ञ हैं।

2. एच ए सी सी पी जैसे कार्यक्रमों की विद्यमानता का अभाव - समुद्री खाद्य निर्यात सेक्टर की तुलना में घरेलू सेक्टर में एच ए सी सी पी कार्यक्रम का कार्यान्वयन बहुत कम है।

3. वर्तमान खाद्य नियमन में कड़ा नियंत्रण और व्यवस्थाओं की अपर्याप्तता - खाद्य का निरीक्षण और नियंत्रण उपाय होने पर भी घरेलू सेक्टर में एच ए सी सी पी व्यवस्था एक अधिदेश के रूप में बनायी नहीं गयी है।

4. लागत आवेष्टन - निर्यात सेक्टर की तुलना में घरेलू मछली/समुद्री खाद्य उत्पादों की बिक्री का लाभ बहुत कम है। इस कारण से इस स्तर के उत्पादकों के लिए एच ए सी सी पी व्यवस्था के कार्यान्वयन की लागत एक अतिरिक्त वित्तीय बोझ हो जाएगा।

घरेलू खाद्य उत्पादों के सेक्टर में एच ए सी सी पी व्यवस्था के कार्यान्वयन के लिए संबंधित विभागों या खाद्य नियमन प्राधिकरणों द्वारा आवश्यक अवबोध या शिक्षा नहीं दी जाने पर घरेलू मछली/मात्स्यिकी उत्पादों के खपत पर खाद्य संदूषण/खाद्य विषाक्तता की घटनाएं आगे भी हो जाएंगी। ■

महाराष्ट्र में लघुटूना मात्स्यिकी

मोहम्मद जफर खान
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान का मुंबई अनुसंधान केन्द्र, मुंबई

लघु टूना *युथिन्नस एफिनिस (Euthynnus affinis)* एक टूना जाति है। यह एक तटीय संपदा है जो कि भारत के तटीय क्षेत्रों में मुख्यतः पकडी जाती है। इस जाति की पैदावार भारत के टूना की पकड का 58% है। (पिल्ले एवं पिल्ले 2000) इस प्रजाति का मांस लाल होने के कारण दूसरे टूना की अपेक्षा इसकी कीमत कम होती है। फिर भी हाल के वर्षों में इसके माँस का फिलेट (Filet) बनाकर निर्यात होने लगा है।

क्लोम जाल द्वारा पश्चिम उत्तर के समुद्री भाग से पकडी गयी यह जाति मात्स्यिकी का एक मुख्य भाग होते हुए भी इसके आयु व बढत, मृत्युता और संभरण पर अभी तक कोई अनुसंधान विवरण प्राप्त नही है।

1995-2000 में इकत्रित किये गये आंकडे, अनुसंधान के आधार पर इस टूना जाति का संभरण पर प्राप्त सूचनाओं को इस लेख में देने का प्रयास किया गया है।

मात्स्यिकी

टूना मछली का उत्पादन लगभग 1,248 टन (1996) से 3,654 टन (1999) था। इसकी औसत पकड 2400 टन थी (चित्र-1)। इसमे *ई. एफीनेस (E. affinis)* का भाग करीबन 1,000 टन (1998) से 2,212 टन (2000) तथा औसत 1,563 टन था। इस जाति का औसतन 87% पकड क्लोम जाल में हुआ था (चित्र-2)। दूसरी जातियाँ *थून्नस टोनगोल (Thunnus tonggol), आकसिस थाजारड (Auxis thazard)* और *ए. रोशी (A. rocher)* थी जो सब मिलकर 13% क्लोम जाल द्वारा पकडी गयी थी।

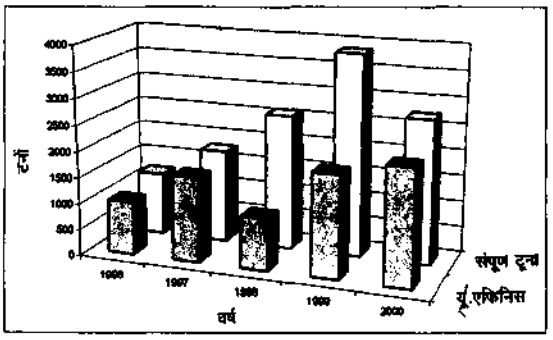

चित्र 1. टूना का वार्षिक उत्पादन (महाराष्ट्र)

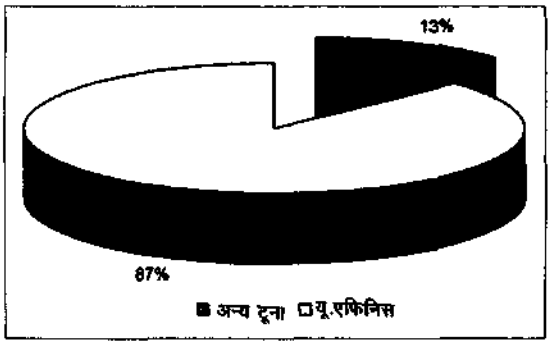

चित्र 2. ई. एफिनिस का योग्यदान

आय व बढती, मृत्युता और संभरण आकार

आय व बढती, मृत्युता और संभरण आकार आयु व बढती पर किए गए अध्ययनों द्वारा ज्ञात हुआ कि *ई. एफिनिस* 81.7 से.मी. की अधिकतम लम्बाई तक बढ़ जाती है। इसकी बढती गुणांक 0.79 है। यह जाति प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय वर्ष के अंत में क्रमशः 44.6 से.मी. 64.9 से.मी. तथा 77.4 से.मी. तक बढती है।

इसकी प्राकृतिक मृत्युता गुणांक दर (M) 0.928 आकलित की गयी है। इसकी औसतन संपूर्ण मृत्यता गुणांक (Z) 1998-2000 काल में 2.24 थी (चित्र-3)। वर्तमान विदोहन दर (F/Z) 0.586 पायी गयी है।

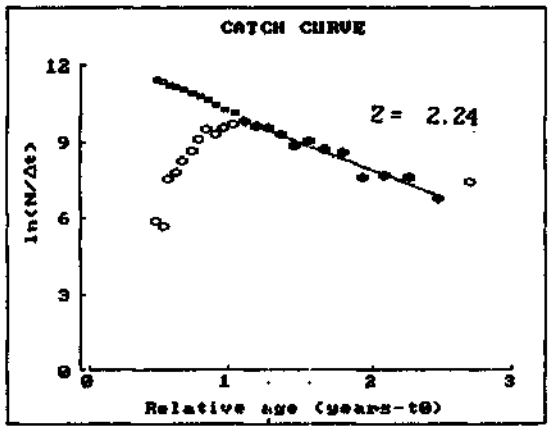

चित्र 3. संपूर्ण मृत्यता गुणांक (Z) 1998-2000

VPA द्वारा औसतन मत्स्यन गुणांक (F) F< 43 से.मी. 1.92 आंका गया है। अभी का औसतन पैदावार लगभग 1,722 ट. (1998-2000) जब कि वर्तमान भंडार 1,348 महाराष्ट्र समुद्र में आकलित किया गया है।

Yield per recruit studies (Yw/R) में ज्ञात होता है कि अभी का इस जाति की मछली पकड अधिकतम दोहन के नजदीक है और महाराष्ट्र मे अधिकतम वाहनीय पकड (MSY) 1,806 टन आकलित किया गया जब कि औसतन प्राप्ति 1,722 टन है।

टूना हालांकि एक मुख्य मात्स्यिकी न होते हुए भी विभिन्न प्रकार के क्लोम जाल 90-120 मी.मी. के अवतरण मे इसका 20-30% का योग्यदान है। *ई. एफीनिस* (*E. affinis*) एक मुख्य जाति है। इसके वर्ष में दो मुख्य प्रजनन काल है प्रथम अक्टूबर-नवंबर और दूसरा अप्रैल-मई। इसकी प्रजनन के समय लंबाई करीबन 44 से.मी. होती है (मुथ्थया, 1986)।

इसकी बढती दर के बारे में वैज्ञानिकों में एक मत नही है। इसका बढती गुणांक 0.36 (सैलास व अन्य 1986) और 2.23 (सुपोनगपान और साहकलिंग, 1987) आंका गया है। हाल ही के वर्षो में फीलीपीनी समुद्र में इसकी तीव्र बढती पायी गयी है (यासाकी, 1994)। इसके मददेनजर अभी का आकलित किया हुआ बढती गुणांक (K) 0.79 और अधिकतम लंबाई 81.7 से.मी. ठीक लगती है।

इस प्रकार ऐसा लगता है कि इसकी बढती काफी तेज है पहले वर्ष में ही 44.6 से.मी. तक पहुँच जाती है यह लम्बाई इसकी कम से कम प्रजनन लम्बाई के बराबर भी है।

प्राकृतिक मृत्युता गुणांक तथा संपूर्ण मृत्युता गुणांक बहुत कुछ बढती गुणांक के ऊपर निर्भर करता है इसी कारण दूसरे वैज्ञानिकों द्वारा आकलित से मिलाया नही जा सकता है। फिलहाल, इस अध्ययन से यह प्रमाणित होता है कि यह जाति पूर्ण क्षमता के अनुसार ही पकडी जा रही है और इसकी पैदावार मत्स्य पकडने वाले प्रचलित क्षेत्रों से बढाने की गुंजाईश नहीं है। ■

मछलियों में पोषण सुरक्षा

प्रीता पणिक्कर, आर. पालराज
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

केरल में मत्स्य कृषि के अनुयोज्य बहुत सा जलाशय है। मत्स्य कृषि की उन्नति के लिए दो चीजों की जरूरत है - अच्छे गुण वाला बीज और पौष्टिक आहार। पौष्टिक आहार कम दाम में मिलने से ही आधुनिक मत्स्य कृषि में शुद्ध लाभ होता है। आजकल बाजार में मिलने वाले मत्स्य आहार की पौष्टिकता वैज्ञानिक ढंग से परीक्षित करना है।

सघन मत्स्य कृषि में अधिकतर कृत्रिम आहार का उपयोग किया जाता है और मत्स्य उत्पादन का 60% खर्च आहार के लिए होता है। आहार आवश्यकता से ज़्यादा देने से परिस्थिति मलिन हो जाता है। इसलिए मत्स्य कृषि की वृद्धि के लिए उस तरह का पौष्टिक आहार चाहिए जो असंस्कृत चीजों से बनी हो और कम दाम में मिलते हो। आहार रीति के प्रकार के अनुसार मत्स्य को तीन श्रेणियों में विभाजन कर सकते हैं। (1) जो सिर्फ सस्याहार खाते हो। (2) जो माँसाहार खाते हो और (3) जो अपने भोजन में सस्य और माँस पदार्थ संयुक्त करते हो। कार्प मछली, तिलापिया आदि सस्याहारी है, कलवा, केकड़ा, ईल आदि माँसाहारी है और रोहु, मृगाल, झींगा आदि दोनों पदार्थ खाते है।

पलनेवाले मत्स्य के प्रकार और उनके आहरण, पचन और वृद्धि के अनुपात के आधार पर संतुलित आहार का उपयोग करना चाहिए। निम्न गुण वाले आहार अमोनिया, हैड्रजन सल्फाईड़ जैसे विष वस्तु उत्पन्न करते है जिससे पानी में प्राणवायु का अंश कम होता है। इस अवस्था से मत्स्यों में रोग आने की सम्भावना होती है। निम्न गुणवाले मत्स्याहार के उपयोग से आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल के उत्तरी भाग में की गयी मत्स्य कृषि में भारी नष्ट हुआ है।

मत्स्य कृषि में उपयोग किये जाने वाले आहार तीन रूप के होते हैं। ठोस आकृति जैसे गोली या बेलनाकार में बनाये गए आहार, आर्द्र रूप और द्रव रूप में भी मत्स्याहार प्राप्य है। ठोस आकृति के आहार में 7 से 13% जलांश ही है। इनके उत्पादन, संग्रहण, वितरण सब आसानी से किया जा सकता है। मत्स्य की वृद्धि के विविध तल में विविध नाप-जोख के ठोस आकृति के आहार बनाये जा सकते है। इस तरह के आहार में आन्टिबयोटिक जैसे औषधि भी समाविष्ट करके तैयार कर सकते है।

द्रव रूप के आहार में 45 से 70% जलांश है। इस प्रकार के आहार कम दाम में मिलने वाले छोटी मछलियाँ कसाईखाने का उच्छिष्ट पदार्थ से बनाये जाते है। इस तरह के आहार का संग्रहण बहुत मुश्किल है।

25 से 45% जलांश का आर्द्र रूप का आहार भी बाजार में उपलब्ध है। इस प्रकार के आहार मछलियों को प्रिय है। लेकिन इनके संग्रहण केलिए शीतीकरण की आवश्यकता है जिससे खर्च बढ़ते है। आर्द्र और द्रव रूप के आहार से पानी जल्द ही मलिन हो जाता है।

मत्स्याहार के उत्पादन केलिए विविध पौष्टिक वस्तुओं का उपयोग किया जाता हैं। मत्स्य व्यवसाय से मिलने वाला मछली, झींगा, केकडा, सीपी के माँस, केकडा और झींगा के छिलका आदि सूखकर बुकनी बनाकर मत्स्याहार के उत्पादन में उपयोग करते है। 50 से 60% प्रोटीन के ठोस आकृति के आहार के उत्पादन में ये पदार्थ बहुत उपयोगी हैं।

कुकुटादि पालन केन्द्र से उपलब्ध चोंच, पैर, आँत जैसे भ्रष्ट भाग में 45 से 60% प्रोटीन, बहुत ज्यादा कालसियम,

फोसफोरस, लोहा, विटामिन भी है।

कसाईखाने का उच्छिष्ट पदार्थ जैसे रक्त, चरबी, भ्रष्ट भाग आदि में प्रोटीन, लोहा, विटामिन 'बी' है। दूध, उच्छिष्टों से बनाया बकनी और मुर्गी के अंडे अच्छे पोषक पदार्थ है।

सस्यजन्य पदार्थ जैसे मूँगफली की बट्टी, नारियल की बट्टी, तिल का बट्टी, चावल और गेहूँ के टुकड़े आदि पौष्टिक आहार के निर्माण में उपयोग करते है।

एक संतुलित मत्स्याहार में आवश्यानुसरण में प्रोटिन, वसा, श्वेतसार, विटामिन, धातु आदि उपलब्ध होने चाहिएं। मत्स्य में अच्छा परिणाम प्राप्ति के लिए खाद्य के अनुपात इष्टतम ढ़ंग में होना बहुत अनिवार्य है। शास्त्रीय मत्स्य कृषि में सबसे महत्वपूर्ण बात उनके खाद्य का निष्पक्ष उपयोग है। ■

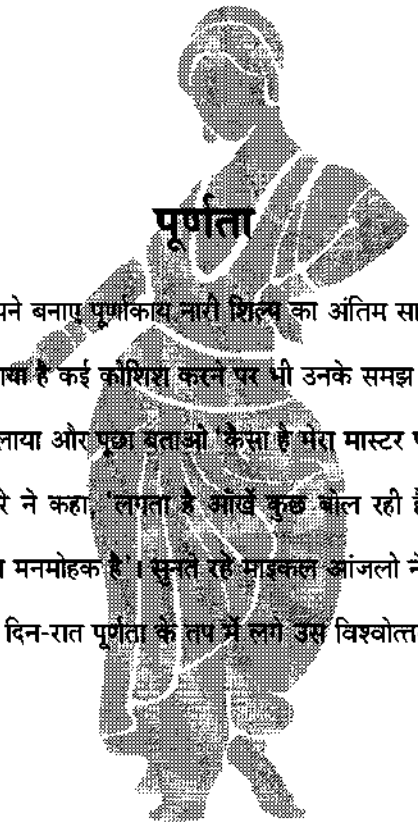

पूर्णता

माइकेल अंजलो अपने बनाए पूर्णाकार नारी शिल्प का अंतिम साज श्रृंगार कर रहे थे। कहीं कुछ खो गया है, क्या खो गया है कई कोशिश करने पर भी उनके समझ में नहीं आ रहे थे। अशांत उन्होंने अपने शिष्यों को बुलाया और पूछा बताओ 'कैसा है मेरा मास्टर पीस?' पहला शिष्य बोला, 'बाँहे बहुत सुन्दर है'। दूसरे ने कहा, 'लगता है आँखें कुछ बोल रही हैं' और तीसरे ने फटाफट बोला, 'आँखें क्यों पूरा मुख मनमोहक है'। सुनते रहे माइकल आंजलो ने उठ लिया अपना हथौडा, तोडा मुख एक ही मार में। दिन-रात पूर्णता के तप में लगे उस विश्वोत्तर शिल्पी ने सोया उस रात शांत।